अंतस

अर्द्धवार्षिक पत्रिका, अंक-17, 26 जनवरी, 2020

स्मृतियाँ

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

नियम- निर्देश

- अंतस के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अपनी मौलिक एवं यथासंभव अप्रकाशित रचनाएं भेजने का कष्ट करें।
- रचनाएं यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम, पद एवं संपर्क विवरण का उल्लेख अपेक्षित है।
- लेखों में शामिल छाया-चित्र तथा आँकड़ों से संबंधित आरेख स्पष्ट होने चाहिए।
- अनुदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क कर सकते हैं।
- प्रकाशन के लिए किसी भी लेखक को किसी प्रकार का मानदेय नहीं दिया जाएगा।
- अंतस में उन सभी प्रकार के विचारों का स्वागत होगा जो संस्थान परिसर में रहने वाले अथवा काम करने वाले लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं किन्तु किसी भी प्रकार के राजनीतिक विचारों को प्रोत्साहित नहीं किया जाएगा।
- अंतस में प्रकाशित रचनाओं में निहित विचारों के लिए संपादक मंडल अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ उत्तरदायी नहीं होगा और इसके लिए पूरी की पूरी जिम्मेदारी स्वयं लेखक की ही होगी।
- रचनाएँ अंतस के अनवरत दो अंकों में प्रकाशित न होने की स्थिति में संबंधित रचनाकार राजभाषा प्रकोष्ठ में श्रीमती सुनीता सिंह से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुवाच्य हिंदी भाषा हो।

स-आभार
संपादक मंडल

अंतस परिवार

संरक्षक
प्रोफेसर अभय करंदीकर

निर्देशन
प्रोफेसर मणीन्द्र अग्रवाल
उपनिदेशक

मुख्य संपादक
डॉ. अर्क वर्मा

संपादक
डॉ. वेदप्रकाश सिंह

संपादन सहयोग
प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा
प्रोफेसर शिखा दीक्षित
डॉ. कांतेश बालानी
श्री विष्णु प्रसाद गुप्ता

अभिकल्प (Design)
सुनीता सिंह

अनुवाद
श्री जगदीश प्रसाद

छायाचित्र
श्री गिरीश पंत

विशेष-सहयोग
प्रस्तुत अंक के सभी रचनाकार
समस्त संस्थान कर्मी
एवं
विद्यार्थी साहित्य सभा

संकेतक

शुभेच्छा

निदेशक 3
उपनिदेशक की दृष्टि में 4
सम्पादकीय 5
कुलसचिव का संदेश 6

साहित्य-यात्रा

अनछुए पल- प्रोफेसर पी. के. केलकर 7
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के
कर्मचारी संगठन द्वारा हीरक जयंती पर विविध आयोजन 13
डायरी 15
आईआईटी कानपुर ज्ञान, विज्ञान, संज्ञान एवं
सामाजिक चेतना की संगम स्थली 16
डर 19
मेरी यादों का सिलसिला 20
माँ है तुम्हारी माँ के बाद 22
जीवन और स्मृतियाँ 23
बस यूँ न बन जायें 24
भारतीय आहार 25
पहली मुलाकात से आज तक 26
विविध या एक 27
गुरुवे नमः 27
साथी नया वर्ष आया है (विरासत) 29
साइबर सुरक्षा-चुनौतियाँ एवं समाधान 30
हे गण 32
मर्यादा का सम्मान 33
लादी बन और अंडे के टुकड़े 34
गणतंत्र दिवस 37
बांग्ला भाषा 38
रावण मन में हँसता है 39
अंतर्विरोध और विरोधाभास 40
टाइटल दमनकारी होता है 41
मैं तुमको ढूँढ़ रहा हूँ 43
एकाकी पल 44
शाम 44
नीम का पेड़ 45
बूढ़ा 45
अभियंता दिवस 46
संघर्ष 47
उदार दिल राजा (बालबत्तीसी) 48

शुभेच्छा
निदेशक की कलम से...

प्रिय पाठकों,

हम सभी के लिए यह बड़े ही हर्ष एवं सौभाग्य का विषय है कि संस्थान अपना हीरक जंयती वर्ष मना रहा है। किसी भी संस्थान के लिए निर्विवाद रूप से 60 वर्षों का सफर तय करना एक बड़ी उपलब्धि माना जा सकता है। पिछले साठ वर्षों में संस्थान ने अनेक विशिष्ट एवं सामाजिक सरोकार से जुड़ी हुई उपलब्धियाँ हासिल की हैं। इन सभी उपलब्धियों में संस्थान के पूर्व एवं वर्तमान संकाय सदस्यों, विद्यार्थियों एवं कर्मचारियों का अतुलनीय योगदान रहा है। हीरक जंयती वर्ष को यादगार बनाने के लिए संस्थान में अनेक संगोष्ठियों, सम्मेलनों सांस्कृतिक एवं तकनीकी कार्यक्रमों का आयोजन किया गया है।

अंतस् का प्रस्तुत अंक स्मृतियाँ शीर्षक लेकर आया है जिसमें संस्थान की भूली-बिसरी एवं खट्टी-मीठी यादों का उल्लेख किया गया है । इस अंक के माध्यम से मैं संस्थान के संकाय सदस्यों, विद्यार्थियों एवं कर्मचारियों का आह्वान करना चाहूंगा कि वह शिक्षण एवं शोध की दृष्टि से संस्थान को और अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने में अपना योगदान दें तथा ऐसी तकनीकें विकसित करें जिससे समाज प्रत्यक्ष रूप में लाभान्वित हो सके।

परिसरवासियों और विशेषरूप से पत्रिका के पाठकों से अनुरोध करना चाहूंगा कि वह पत्रिका के प्रकाशन मण्डल को अपने तकनीकी एवं अनुसंधान संबंधी लेख उपलब्ध कराये जिससे पत्रिका को और अधिक समृद्ध एवं उपयोगी बनाया जा सके।

धन्यवाद!

नये वर्ष की हार्दिक शुभकामनाओं के साथ !

अभय करंदीकर

अभय करंदीकर
निदेशक

शुभेच्छा
उपनिदेशक की दृष्टि में

प्रिय पाठक,

आप सभी लोगों को गणतंत्र दिवस की बहुत बहुत बधाई!

'अंतस' पत्रिका का 17वाँ अंक आपके हाथ में है। पत्रिका की आठ वर्ष से अधिक की यात्रा और संस्थान का हीरक जयंती वर्ष, दोनों की यात्रा संतोष प्रदान करनेवाली है। जिस प्रकार से सामाजिक और राष्ट्रीय चिंतन के साथ 60 वर्ष पूर्व इस संस्थान की स्थापना की गई थी, उसीप्रकार कुछ सपनों के साथ संस्थान के कुछ समानधर्मा साहित्यकारों द्वारा अंतस पत्रिका की शुरुआत की गई, जिसे आप जैसे सुधी पाठकों और रचनाकारों का खूब प्यार मिला। प्रसन्नता की बात है कि पत्रिका अब विदेशों में रहने वाले हमारे पूर्व छात्रों में भी लोकप्रिय हो रही है।

प्रस्तुत अंक को अन्य रचनाओं के साथ संस्थान की लम्बी यात्रा से जुड़े कुछ स्मृति लेखों से भी सजाया सँवारा गया है, उम्मीद है पाठकों को इस अंक की सामग्री रुचिकर लगेगी। मित्रों, इस संस्थान का एक बहुत ही समृद्ध इतिहास है। सभी आचार्यों, अधिकारियों और कर्मचारियों से संस्थान ये अपेक्षा करता है कि हम सभी मिलकर वर्तमान में अध्ययन-रत छात्र-छात्राओं को भारतीयता-सम्मत प्रौद्योगिकीय शिक्षा प्रदान करने में हमेशा की तरह अपनी निरंतरता बनाए रखें जिससे वे भी, हमारे पूर्व छात्रों की भाँति, अपने अधुनातन प्रयोगों, आविष्कारों से संस्थान की गरिमा के अनुरूप इसके उज्जवल भविष्य और राष्ट्र के सम्मान को विश्वस्तर पर स्थापित करने में शलाका पुरुष बनकर उभरें।

संस्थान और 'अंतस' पत्रिका के संवर्धन और बेहतरी के लिए आप सभी प्रयत्नशील रहें यही मेरी मनोकामना है।
हमेशा की तरह हमें इस अंक पर भी आपकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।
धन्यवाद!

मणीन्द्र अग्रवाल
उपनिदेशक

संपादकीय

अंतस के सभी पाठकगण और सभी कैंपस निवासियों को मेरा सादर नमस्कार और नव वर्ष 2020 के मंगलमय होने की हार्दिक शुभकामनाएँ।

प्रस्तुत सत्र में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर अपना हीरक जयंती वर्ष मना रहा है और इसी उपलक्ष्य में ''स्मृतियाँ'' शीर्षक के साथ अंतस का यह विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। इसी श्रृंखला में अंतस का अगला अंक भी ''स्मृतियाँ'' शीर्षक के साथ ही प्रकाशित होगा। इस पहल के लिए हम हीरक जयंती समारोह के अध्यक्ष प्रो. समीर खांडेकर जी का धन्यवाद करते हैं।

स्मृतियों का हमारे जीवन में एक विशेष स्थान होता है। स्मृतियाँ न सिर्फ हमारे जीवन का परिप्रेक्ष्य स्थापित करने में सहायक होती हैं बल्कि जीवन के कई भूले-बिसरे क्षणों को हमारे सामने लाकर, हमें आगे की दिशा निर्धारित करने के लिए प्रेरित भी करती हैं।

भा. प्रौ. सं कानपुर के लिए विगत वर्ष भी अनेकों स्मृतियों को दोहराने वाला रहा है। देश के एक अति विशिष्ट शिक्षण संस्थान के रूप में हमारा गौरवपूर्ण सफर किसी परिचय का मोहताज नहीं है। 1959 में अपनी स्थापना के उपरांत भा. प्रौ. सं कानपुर ने सफलता के कई सोपान छुए हैं। इस वर्ष जब कि संस्थान अपना हीरक जयंती वर्ष मना रहा है, तब मुझे विश्वास है कि संस्थान से अलग-अलग समय में जुड़े छात्र - छात्राएं, शिक्षक, कर्मचारी एवं सभी लोग एक विशेष गर्व की अनुभूति कर रहे होंगे।

अंतस के इस अंक की उपयुक्त शुरुआत, श्री सोमनाथ डनायक जी हमारे प्रथम निदेशक आदरणीय प्रो. पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर के बारे में संकलित एक संस्मरण से करते हैं। पाठकों को, खासकर युवा पाठकों को इस संस्मरण से यह ज्ञात होगा कि हमारे इस विशिष्ट संस्थान की नींव रखने वाले प्रो. केलकर न ही सिर्फ एक सम्मानित वैज्ञानिक थे परन्तु वो सबको साथ लेकर चलने में विश्वास रखने वाले एक नेता भी थे, जिनके नेतृत्व में संस्थान के प्रारंभिक मूल्यों की स्थापना हुई।

आगे बढ़ने पर प्रो. नरेन्द्र कुमार शर्मा जी भी अपने समय के कुछ अनुभव पाठकों से साझा करते हैं। प्रो. शर्मा के इस लेख से आई आई टी शिक्षा व्यवस्था के अंतगर्त भा. प्रौ. सं कानपुर का जो विशिष्ट स्थान है उसके पीछे के कुछ कारणों के बारे में हमें एक बहुमूल्य अंतर्दृष्टि मिलती है।

संस्थान से लम्बे समय तक जुड़े रहे डॉ. ओ पी मिश्र भी संस्थान में अपने कार्यकाल से कुछ खट्टे - मीठे अनुभव साझा करते हैं, जो कि बेहद रुचिकर हैं और संस्थान के सभी कर्मचारियों की कर्तव्यनिष्ठा की बानगी देते हैं।

इनके अलावा भी इस अंक में संकलित सभी रचनायें, लेख, एवं कवितायें, जिन्हें आप स्नेही पाठकों ने बड़े प्रेम से भेजा है, चाहे वह ''लादी बन एवं अंडे के टुकड़े'' शीर्षक वाली लघु कथा हो या डॉ. संतोष मिश्र का स्मृतियों पर लिखा हुआ रोचक लेख या फिर भारतीय आहार के बारे में लिखा गया ज्ञानवर्धक लेख काफी पठनीय एवं रुचिकर हैं।

बतौर संपादक मैं आप सभी पाठकों और रचनाकारों का अंतस से जुड़े रहने के लिए हार्दिक धन्यवाद करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप हमसे अपना स्नेह और आशीर्वाद इसी प्रकार बनाये रखेंगे।

अर्क वर्मा

अर्क वर्मा
संपादक
अंतस

शुभेच्छा
कुलसचिव की दृष्टि में

प्रिय पाठक,

मेरा व्यक्तिगत विचार है कि भावनाओं, विचारों के संप्रेषण के सहज माध्यम के रूप में राजभाषा हिंदी का समग्र रूप से एक प्रमुख स्थान है। इसी अभिलाषा के साथ लगभग आठ वर्ष पूर्व संस्थान की गृह पत्रिका 'अंतस' का आविर्भाव हुआ, जिसका 17वाँ अंक आप लोगों के समक्ष रखते हुए प्रसन्नता हो रही है। आपको यह जानकार खुशी होगी कि पाठकों में दिन प्रतिदिन इस पत्रिका के प्रति रूचि बढ़ रही है और विभिन्न माध्यमो से छात्रों, पूर्व छात्रों, संकाय सदस्यों, अधिकारियों,कर्मचारियों और संस्थान-परिसर में रहने वाले अन्य लोगों का बढ़ता हुआ योगदान यह दर्शाता है कि इस पत्रिका ने आप सभी के बीच में अपना लोकप्रिय स्थान बना लिया है। संपादक मंडल के समर्पित भाव और निरंतर प्रयास के द्वारा पत्रिका का प्रत्येक अंक दिन प्रतिदिन रुचिकर होता जा रहा है। आने वाले अंको को और भी सारगर्भित और आकर्षक बनाने के लिए हम कृतसंकल्प है।

पत्रिका के प्रकाशन से अधिकारियों,कर्मचारियों की रचना-धर्मिता में वृद्धि होती है, विचारों के आदान-प्रदान में परिष्कार होता है। वस्तुतः हम सभी का यह पुनीत दायित्त्व है कि हम राजभाषा हिंदी को केवल कार्यालयों तक ही न सीमित रखें बल्कि संस्थान से बाहर भी भाषाई सौहार्द का प्रचार-प्रसार करते हुए राजभाषा हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग को सुनिश्चित करने में सहभागी बनें।

मुझे विश्वास है की 'अंतस' का यह अंक भी संस्थान के समस्त कार्यालयों में राजभाषा नीतियों के कार्यान्वयन को दृढ़ता प्रदान करेगा। 17वें अंक के सफल प्रकाशन के लिए सम्पादक मंडल को मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

आप सभी को नये वर्ष की एवं गणतंत्र-दिवस की ढेर सारी शुभकामनाएँ!

कृष्ण कुमार तिवारी
कुलसचिव

बचपन अर्थात निर्भीक मस्ती के दिन, एक छोटी बालिका अपने बड़े भाई से कपड़े के एक चौकोर टुकड़े से गुड़िया बनाना सीखती है। वो अभी निपुण नहीं हो पाई है फिर भी इसे बनाकर भाई को यह जताना चाहती है कि वह बना सकती है। आखिर असफल होकर वह रो पड़ती है। भाई सुबकती हुई छोटी बहिन के कंधों पर ढ़ांढ़स भरे अपने दोनों हाथ रखता है और कहता है "तुमको पता है गुड़िया क्यों नहीं बन सकी ..... इसलिए क्योंकि तुम्हारा उद्देश्य गुड़िया को बनाना नहीं था बल्कि तुम मुझे ये बताना चाहती थी कि तुम इसे कैसे बना सकती हो। इसके विपरीत यदि तुम स्वयं अपनी खुशी या संतुष्टि के लिए इसे बनाती तो यह अवश्य बन जाती। बचपन की अवस्था में ही मनोविज्ञान की इतनी समझ रखने वाले इस बालक का नाम था पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर।"

आई.आई.टी. पद्धति एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र से जुड़ा हुआ कदाचित ही कोई व्यक्ति होगा जो आई.आई. टी. कानपुर के आधार-स्तम्भ एवं विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी आदरणीय प्राध्यापक पुरुषोत्तम काशीनाथ केलकर के नाम से अपरिचित हो। पी के सर का जन्म 01 जून 1909 को कर्नाटक के धारवाड़ जिले में हुआ था। इनके पिता श्री काशीनाथ जी दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक थे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा मुंबई एवं पुणे में हुई। इन्होंने बचपन से ही एक कुशल वक्ता के रूप में कई पुरस्कार प्राप्त किए। सन 1931 में रॉयल इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस से भौतिक विज्ञान में स्नातक (ऑनर्स) की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात भारतीय विज्ञान संस्थान, बैंगलौर से विद्युत अभियांत्रिकी में डिप्लोमा किया। तत्पश्चात नौकरी न करके उच्च शिक्षा ग्रहण करने का निर्णय लिया और प्रतिभावान विद्यार्थियों के सहायतार्थ, इचलकरंजी नामक एक ट्रस्ट की सहायता से एक शोधार्थी के रूप में लीवरपूल यूनिवर्सिटी, लंदन में प्रवेश लिया। सन 1937 में 'एकॉस्टिक मापन एवं सिंक्रोनस मशीन' के क्षेत्र में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त कर मेट्रोपॉलिटन विकर्स में इंटर्न कार्य पूर्ण किया। शीघ्र ही भारत आकार सन 1937 से 1943 तक उन्होने अपनी मातृ-संस्था भारतीय विज्ञान संस्थान बैंगलौर में अध्यापन कार्य किया। सन 1943 से 1956 तक पी के केलकर सर विक्टोरिया जुबली टेक्निकल संस्थान, मुंबई के विद्युत अभियांत्रिकी विभाग में प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष भी रहे। यह कार्यकाल उन्होंने मुंबई के आसपास की एकमात्र हाई-वोल्टेज टेस्टिंग

जैसी बड़ी सुविधाओं को प्रारम्भ करने एवं अनेकों सृजनशील कार्यों में व्यतीत किया जो BJT। ही नहीं वरन औद्योगिक क्षेत्रों के लिए भी एक फलदायी अवधि साबित हुआ। बैंगलोर के उनके एक संकाय मित्र प्रो. चारी बड़ी ही आत्मीयता से चयन प्रक्रिया पर उनके उद्देश्य को याद करते हैं –

"एक साक्षात्कार का उद्देश्य केवल उस कौशल और ज्ञान को सूचीबद्ध करना नहीं है जो उम्मीदवारों के पास हैं, बल्कि यह भी है कि इनका उपयोग संस्थान की वर्तमान जरूरतों और विकास में मदद करने के लिए कैसे किया जाएगा।"

सरकार समिति से प्रेरित पंडित जवाहरलाल नेहरू का दृष्टिकोण था कि उन्नत राष्ट्रों के सहयोग से नए आज़ाद भारत का प्रौद्योगिकी विकास अधिक तेजी से होगा और इसी सोच ने भारत में आई.आई. टी. प्रणाली के विकास को जन्म दिया। सन 1953 में खड़गपुर में देश का पहला आई.आई.टी. खुला। मुंबई में दूसरे आई.आई.टी. की स्थापना हेतु पंडित नेहरू ने यूनेस्को के माध्यम से रशिया का सहयोग जुटाया। सन् 1955 में केलकर सर ने इस सृजन कार्य हेतु भारत-यूनेस्को मिशन के सदस्य के रूप में यू.एस.एस.आर. का दौरा भी किया। सन 1956 में वे आई.आई.टी. मुंबई में योजना अधिकारी के रूप में चयनित किए गए। यहाँ रूसी विशेषज्ञों के समूह एवं टीम लीडर प्रोफेसर व्लादिमीर मार्टिनोवस्की के साथ सुदृढ़ संबंध रखते हुये

उन्होने आईआईटी बॉम्बे के प्रारंभिक विकास में अद्वितीय सहयोग किया। कालांतर में वे संस्थान के उप-निदेशक हुये। उनके एक पारिवारिक सदस्य के अनुसार वे स्वयं में तो अनुशासित थे फिर भी व्यंजनों के शौकीन थे और पार्टियों में विविध व्यंजन, उनकी सजावट, स्वाद एवं बैठने आदि की सुचारु व्यवस्थाओं से आनंदित होते थे।

केलकर सर ने दिसंबर 1959 में कानपुर के हरकोर्ट बटलर टेक्नोलॉजिकल इंस्टीट्यूट की कैंटीन के एक कमरे में आई.आई.टी. कानपुर की नींव रखी। हमारे इस संस्थान को उन्होने अपने जिस व्यापक दृष्टिकोण के द्वारा आकार दिया, उसे प्रो. एस.पी. सुखात्मे की पुस्तक "आई.आई.टी. बॉम्बे में चार दशक" के माध्यम से समझा जा सकता है। उनके अनुसार "पी के केलकर सर अत्यंत दूरदर्शी थे जिनमें दार्शनिक दृष्टिकोण और शिक्षा के लिए एक गहरी भावना निहित थी। उनके लिए शिक्षा का अर्थ विषयों को सीखना मात्र न होकर एक छात्र का सर्वांगीण विकास होना था। उनके अनुसार मानविकी और सामाजिक विज्ञान को छात्रों के स्वयं के हित के लिए आकर्षक विषयों के रूप में पहले पढ़ाया जाना चाहिए तदुपरान्त अभियांत्रिकी विषयों को पहले विज्ञान और अंततः एक कला के रूप में सिखाया जाना चाहिए। यही विश्व के उच्च-कोटि विश्वविद्यालयों का दर्शन है, इस सोच पर वे विश्वास करते थे और आई.आई.टी. कानपुर में उन्होने इस सोच को आकार भी दिया। यहाँ का सेमेस्टर सिस्टम और पाठ्यक्रम नीतियां उस समय एक इंजीनियरिंग संस्थान के लिए विशिष्ट थीं।"

निदेशक के रूप में आई.आई.टी. कानपुर को अपने दो कार्यकाल से भी अधिक की लंबी अवधि देकर इसे एक विशिष्ट संस्थान बनाने में पी के केलकर सर की भूमिका को सदैव याद किया जाएगा। सन 1970 में एक बार पुनः आई.आई.टी. मुंबई पहुँच कर निदेशक के पद पर रहते हुये उन्होने वहाँ भी अपनी अपनी सृजनात्मक क्षमता का उपयोग करते हुये अपने उच्चस्तरीय दृष्टिकोण को साकार करने की दिशा में सफलता प्राप्त की और सन 1974 में सेवानिवृत्त हुये।

बहुधा हम किसी व्यक्तिविशेष के व्यावसायिक पक्ष से तो भली-भाँति परिचित होते हैं, किन्तु जीवन के कुछ अनछुए पक्ष भी ऐसे होते हैं जो न केवल जानने योग्य अपितु प्रेरणादायक भी होते हैं। तो आइये, संस्थान के हीरक जयंती वर्ष के इस शुभ अवसर पर हम पी. के. केलकर सर के जीवन के कुछ अनछुए पलों को खोजते हैं, जो उन्होंने कानपुर में व्यतीत किए और इस खोज का माध्यम होंगे हमारे संस्थान एवं प्रो. केलकर से जुड़े हमारे एक वरिष्ठ साथी जो अब सेवानिवृत्त हो चुके हैं। और ये हैं आदरणीय नारायणदत्त थपलियाल अंकल, जिनको यदि एक 74 वर्षीय युवा कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। रोजी-रोटी की तलाश थपलियाल अंकल को एक छोटी सी उम्र में ही पहाड़ों से कानपुर ले आई थी।उन्होंने जब अपने प्रारम्भिक संघर्षों से लेकर मेहनत और मृदु आचरण के साथ एक उचित मुकाम तक पहुँचने एवं सेवानिवृत्ति के उपरांत भी पेट्रोलियम संस्थान, रायबरेली में एक अधिकारी के रूप में कई वर्षों तक अपनी सेवाएँ देने की कहानी बताई तो एक रोचक तथ्य प्रकट हुआ।

"कठिन श्रम और सच्चे प्रयास ही सफलता की सार्थकता को व्यक्त करते हैं क्योंकि ये अनुभवजन्य होते हैं और अंततः आत्मविश्वास के साथ-साथ शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य प्रदान करते हैं।"

प्रो. केलकर से संबन्धित कुछ रोचक विवरण अब हम थपलियाल अंकल के मुंह से ही सुनेंगे। "मैं अपने चाचाजी के बुलावे पर सन 1963 में रोजी-रोटी की तलाश में कानपुर आया और आईआईटी कानपुर में संस्थान निर्माण कार्य से जुड़े एक ठेकेदार के पास अनुबंध पर लग गया। उसी समय संस्थान के गेस्ट हाउस में केयर-टेकर के रूप में एक व्यक्ति की आवश्यकता महसूस की गई। वहाँ एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो रोज़मर्रा की व्यवस्था के साथ-साथ देश-विदेश से आने वाले मेहमानों का भी ध्यान रख सके। ऐसे में हमारे एक्सिक्यूटिव इंजीनियर श्री वी. सी. जैन जी ने हम दो-तीन लोगों को यह कहते हुये वहाँ भेजा कि जो काम नहीं कर पाएगा उसकी छुट्टी। वहाँ पुराने लोग कहते "अरे ये लड़का क्या जानता है और कैसे हम लोगों से काम लेगा" तब मुझे लगता कि यहाँ बड़े-बड़े मठाधीशों के मध्य मैं ही सबसे कमजोर कड़ी हूँ। मुझे मेस का कार्यभार सौंप दिया गया। सुबह 6 बजे से लेकर रात के 10 बज जाते। सोचा कि यहाँ तो दाना-पानी मुश्किल है, और मैं पुनः इंजीनियर साहब के पास चला गया। लेकिन उन्होंने हाथ खड़े कर लिए। मरता क्या न करता, वापस गेस्टहाउस आ गया। लेकिन ईश्वर ने एक दिन मेरी पुकार सुन ही ली। मेस के एक कुक जिनको मैं रामलाल चाचा कहा करता था

एक दिन बोले "बेटा पूरा दिन रहने की क्या आवश्यकता है। सुबह राशन निकलवा कर और यदि कोई विशेष काम हो तो उसे बताकर चले जाया करो और समय-समय पर आकर देख लो।" रामलाल चाचा ने कार्य की प्रकृति के अनुसार उसके मैनेजमेंट की एक बड़ी शिक्षा दे दी थी। बस इसके बाद बढ़ते हुये अनुभव के साथ-साथ समस्याओं को सुलझाने और प्रबंधन का गुण बढ़ता गया। किन्तु प्रतिदिन 9 बजे मस्टर-रोल पर हाजिरी भरने के लिए ठेकेदार के पास जाने की समस्या शेष थी। सोचा कुछ जुगाड़ भिड़ाना होगा। आखिर एक दिन मौका मिल ही गया। उस समय प्रो. मुथन्ना जी उप-निदेशक हुआ करते थे। हिम्मत कर उनसे मैंने अपनी व्यथा-कथा कह दी। वैसे तो वे कड़क इंसान मालूम होते थे किन्तु मेरी समस्या को भली-भांति समझा और निर्णय दे दिया कि "ये लड़का जब गेस्ट हाउस में काम करता है तो मस्टर-रोल साइन करने दूसरी जगह क्यों जाएगा?" इस तरह मैं पक्के तौर पर गेस्ट हाउस आ गया।

गेस्ट हाउस के अन्य कर्मचारी क्षेत्रीय होने के कारण समय-समय पर घर चले जाते, वहीं मेरा अधिकांश समय गेस्टहाउस में गुजरता। मैं सक्रिय भी था सो जब भी संस्थान के बड़े अधिकारी आते तो लोग मुझे ही आगे कर देते। इस तरह अन्य अधिकारियों के साथ-साथ उप-निदेशक एवं निदेशक महोदय से संपर्क होने लगा। तत्कालीन निदेशक केलकर साहब का फ्लैट मुंबई में था। उनका परिवार अमूमन मुंबई में ही रहा करता था। उनके एक पुत्र और एक पुत्री थे जिनके नाम क्रमशः शशांक एवं मदुरा थे। आगे चलकर शशांक ने कानपुर आईआईटी से एम. टेक. भी किया। उनका परिवार अत्यंत सादगी भरा था। कभी-कभी जब केलकर साहब के कुक, प्रतापगढ़ क्षेत्र के निवासी शुक्ला जी, अपने गाँव चले जाते तो उनका खाना गेस्ट हाउस से ही जाया करता। कभी भिजवा देता या कभी मैं स्वयं ही उनका खाना लेकर चला जाता। केलकर साहब मेरी लड़कपन भरी बातों और स्वभाव से खुश रहते थे। उपनिदेशक महोदय मुथन्ना साहब भी मुझे पसंद करते थे। केलकर साहब की एक बड़ी विशेषता यह थी कि व्यक्ति चाहे छोटा हो या बड़ा, वे हमेशा एक समान रूप से मिलते। उनका दृष्टिकोण बहुत बड़ा था। मैं तो कहूँगा कि आई.आई.टी. कानपुर एवं इसका यह विशाल परिसर उनके दृष्टिकोण का ही परिणाम है। सुना तो यहाँ तक है कि पहले हमारा संस्थान पंजाब में संभावित था। किन्तु उत्तरप्रदेश के मुख्य मंत्री रह चुके एक तेज तर्रार नेता श्री चन्द्र भानु गुप्ता जी, जो संस्थान के चेयरमैन भी रह चुके थे, ने पंडित जवाहर लाल नेहरू जी से स्पष्ट कह दिया कि आई.आई.टी. उत्तरप्रदेश में ही आयेगा। उस समय कानपुर एक बहुत बड़ा औद्योगिक केंद्र हुआ करता था। आज जो कारखाने बंद पड़े हुए हैं सभी सुचारू रूप से चलते थे। जब एल्गिन मिल, अथर्टन मिल, म्योर मिल इत्यादि कारखानों की छुट्टी होती तो इतनी भीड़ होती कि लालइमली की ओर जाने को रास्ता ही न रहता ।

कभी-कभी शाम के वक्त निदेशक साहब बड़े ही आत्मीय अंदाज में मुझे कहते "मिस्टर नारायणदत्त, सेंड माय फूड.... बट डोंट सेंड थ्रू एनीबडी ....यू ब्रिंग इट ....।" और उनका भोजन होता "केवल एक कटोरी चावल और एक कटोरी दही।" बड़ा ही सादगी भरा भोजन था उनका। संघ के प्रति उनका झुकाव था। जब भी 15 अगस्त या 26 जनवरी जैसे राष्ट्रीय पर्व आते तो वे काली टोपी अवश्य पहनते। तत्कालीन सरकार में उनकी अच्छी ख़ासी मान्यता थी। एक बार मैंने उनसे कहा "सर आपने आई.आई.टी. के लिए बहुत बड़ी जगह ले ली ...?" तो उनका कहना था अभी तो इसका प्रारम्भ है और आगे इसे बहुत विकास करना है ... आज सरकार सहयोग कर रही है ... हमें अभी वातांतरिक्ष अभियांत्रिकी का पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ करना है अतः हमें भविष्य में अधिक स्थान की आवश्यकता होगी और तब यह सब इतना आसान नहीं होगा जितना आज...। ऐसी गहन दूरदृष्टि थी उनकी। थपलियाल अंकल की बातें मैं मंत्रमुग्ध होकर सुन रहा था। हमारे प्रथम निदेशक महोदय की दूरदृष्टि आज के परिपेक्ष्य में अत्यंत सार्थक ही तो थी।

थपलियाल अंकल ने वार्तालाप को आगे बढ़ाया। एक बार मैं उनके बंगले पर ही कुछ पैकेट्स बनवाने में उन्हें सहयोग कर रहा था। हम लोग एक दरी पर बैठे हुये थे। तभी बंगले का एक कर्मचारी दौड़ा हुआ आया! शायद कोई छोटा-मोटा बवाल हुआ था। केलकर साहब छोटे-बड़े सभी व्यक्तियों से एकसमान रूप से बात करते थे। उसने सारी बातें कौतूहलपूर्वक केलकर साहब से कह दी। उन्होंने भी आश्चर्य मिश्रित जवाब दिया "अरे बाबा ऐसा हुआ है ...।" थोड़ी ही देर में एक दूसरा व्यक्ति वही घटना बताने आया। उन्होने उसे भी ऐसे सुना मानो पहली बार सुन रहे हों। मुझे आश्चर्य मिश्रित हँसी तो तब आई जब पुनः एक तीसरा व्यक्ति उसी घटना को बताने आया और उन्होने उतने ही धैर्य के साथ उसे भी सुना। मुझे रहा न गया। मुँहलगा

तो था ही, पूंछने ही वाला था कि उन्होंने मेरे मनोभावों को पढ़ लिया और मुस्कराते हुये बोले "ये सब मेरी आँखें हैं ...." यदि मैं दूसरे और तीसरे को यह कहकर वापस भेज दूँ कि मुझे पहले से ही जानकारी है तो अगली बार से वो मुझे कुछ बताने आएंगे ही नहीं क्योंकि उनको लगेगा कि मुझे तो पहले ही सब ज्ञात होता है। निःसंदेह उनमें गज़ब का धैर्य था और वह भी नीतिगत। एम.एस. ठक्कर, होमी भाभा, एम जी के मेनन, जॉन पी लुईस जैसी हस्तियाँ एवं देश-विदेश के बहुत से वैज्ञानिक यहाँ आते रहते थे। मेहमानों के साथ पार्टियां भी होती। किन्तु वे शराब कभी नहीं पीते थे। हाँ! ड्रिंक पार्टियों में ग्लास सबसे पहले पकड़ते थे।

मेरी उत्सुकता बढ़ गई "क्या यहाँ सर विक्रम साराभाई भी कभी आए? और केलकर सर के ग्लास में क्या सादा ड्रिंक होती थी" मैंने थपलियाल अंकल से पूछा ...?

हाँ, यहाँ साराभाई जी भी आए थे किन्तु वे मुथन्ना जी के समय में आए थे ...। न न ..! ग्लास में तो व्हिस्की ही होती थी। सर्व तो एक समान रूप से होती। किन्तु वे अंत तक ग्लास को वैसे ही पकड़े रहते और हाथ कभी मुँह तक न जाता। एक मजेदार घटना सुनाता हूँ। कलयुग में अमृत सदृश चाय की चुसकियों के साथ अंकल ने बताना प्रारम्भ किया।

"समय-समय पर आगंतुक मेहमानों के लिए पार्टियां होती ही रहती थी। विदेशी शराब हुआ करती थी। महमूद खान जी की ड्यूटी सर्व करने की हुआ करती। महमूद भाई उनके ग्लास में एक की जगह दो पैग भर देते। इधर पार्टी समाप्त होती तो उधर महमूद भाई के इंतज़ार की घड़ियाँ। अंततः ग्लास उनके हलक में उतर जाता। एक बार केलकर साहब ने मुझे बुलाया और पूछा- "व्हिस्की के दो ब्रांड थे क्या ...?''

मैंने कहा नहीं सर एक ही ब्रांड थी क्यों ...?

लेकिन अक्सर मुझे अपना ग्लास कुछ ज्यादा ही डार्क ढिखाई देता है, ऐसा क्यों ...?

मुझे लगा मैं पकड़ा जाऊंगा सो मैंने सही बात बता दी। सर वो महमूद खान आपके ग्लास में ज्यादा डाल देता है और बाद में पी जाता है क्योंकि मैं तो उसे देने वाला नहीं ...।

मुझे लगा अब महमूद की आफत आने को है, लेकिन उन्होने इस बात को इस तरह से लिया मानो महमूद भाई की मासूमियत को पढ़ लिया हो। बोले बहुत शैतान है महमूद .... "उससे बोलो कि जैसे ये बात मेरी नजर में आई मेहमानो की नजर में भी आ सकती है, और ये अच्छा नहीं लगेगा ... इसलिए ऐसा न किया करे ...। मेहमानों को ये थोड़े ही पता है कि मैं नहीं पीता हूँ ... उसे दो पैग अलग से दे दिया करो।" बड़े ही विशाल हृदय थे केलकर साहब। किसी भी समस्या का निदान वो बड़ी सहजता से कर देते थे।

उस समय दो धाराएँ थी एक कड़क और एक नरम। उपनिदेशक मुथन्ना साहब जहां कड़क प्रकृति के थे वहीं केलकर साहब नरम प्रकृति के। बड़ा संस्थान है सो छोटी, बड़ी तमाम तरह की शिकायतें भी आती रहती। जहां तक मैंने समझा, इन सब पर केलकर जी सहज रहते। उनका ये कहना था कि आवश्यक नहीं कि हर कोई अपने कार्य पर सौ प्रतिशत खरा हो। यदि वो सत्तर प्रतिशत भी है तो यह ठीक है। इस दृष्टिकोण के साथ ही उन्होने आई आई टी को आगे बढ़ाया। प्रो. ई. सी. सुब्बाराव, प्रो. के. के. सिंह, प्रो. पी वेंकटेस्वरलु एवं अपने क्षेत्र के कई अन्य दिग्गज प्राध्यापकों को लाने का श्रेय भी केलकर साहब को जाता है, जिनका तकनीकी क्षेत्र में विशिष्ट योगदान रहा है। एक बार संस्थान के चेयरमेन जो पूर्व मुख्य मंत्री उत्तर प्रदेश भी थे, संस्थान आए हुये थे और प्रो. पी. वेंकटेश्वरलु से मिलना चाहते थे। वेंकटेश्वरलु सर जो कि लेसर के क्षेत्र में कार्य करते थे अपने प्रयोगों में लगे थे "आ रहे हैं ....आ रहे हैं ...." कहकर पुनः अपने प्रयोग में मस्त हो गए। केलकर साहब उनकी इस प्रकृति को जानते थे अतः चेयरमैन श्री चन्द्र भानु गुप्ता जी से बोले "सर वो नहीं आ पाएंगे... हम लोगों को ही वहाँ जाना पड़ेगा।" इस तरह वे स्वयं चेयरमैन सर के साथ उनकी लैब में जा पहुंचे और उनके संकोच को तोड़ते हुये बोले "आप अपना काम करते रहिए, हम लोग आपसे इधर ही मिल लेंगे।"

थपलियाल अंकल की बातें मुझे मंत्र-मुग्ध कर रही थी। सुब्बाराव सर का नाम सुनते ही मुझे उनकी एक पुस्तक "एक्सपेरीमेंट्स इन मटेरियल्स साइंस" याद आ गई। उनकी पुस्तक को पढ़कर मात्र ही उनकी प्रायोगिक एवं व्यावसायिक कर्मठता का पता चल जाता है। संयोगवश सन 2013 में पदार्थ विज्ञान कार्यक्रम में विभागीय समीक्षा समिति के प्रमुख के रूप में उनका आगमन हो गया। उस पल की अपनी खुशी को मैं व्यक्त नहीं कर सकता जब उन्होंने लैब में प्रवेश

किया। मैंने जल्दी-जल्दी उनको सारे प्रयोग दिखा डाले और उनकी लिखी हुई पुस्तक को इंगित करते हुये कहा कि "सर आपकी पुस्तक पढ़कर ही अधिकांश प्रयोग बनाए हैं....।" तब सुब्बाराव सर ने बताया कि कैसे उन्होने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर प्रयोगों की एल लंबी शृंखला को पहले स्वयं करके देखा फिर पुस्तक लिखी गई। उन्होने इस पुस्तक के लिए प्रो. डी. चक्रवर्ती, प्रो. एल. के. सिंघल, प्रो. मार्शल एफ. मेरियम, प्रो. वी. राघवन एवं श्री के.पी. मुखर्जी आदि के योगदान को याद करते हुये अपनी बहुत सी पुरानी यादों को समीक्षा दल के सामने रखा।

> "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन .... अर्थात तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फलों में कभी नहीं..।" विज्ञान का क्षेत्र सही अर्थों में इससे जुड़े हुये लोगों में एक आकर्षण एवं उत्साह उत्पन्न करता है और इस प्रकृति से युक्त लोग अपनी ज्ञान-पिपासा को शांत करने हेतु घंटों कार्य करते नहीं थकते। इस मनोविज्ञान को भली-भांति समझकर ऐसे व्यक्तियों को चुनकर यहाँ लाने वाले केलकर सर जैसे व्यक्तित्व सही अर्थों में एक तकनीकी संस्थान की वास्तविक सफलता को दर्शाते हैं ।

थपलियाल अंकल बताते हैं कि एक बार केलकर सर का 60 वां जन्मदिवस मनाया गया। कार्यक्रम में संस्थान के संकाय सदस्य अपने-अपने परिवार के साथ उपस्थित थे। कुछ बाहर से आए मेहमान भी थे। तब श्री पद्मपत सिंघानिया जी जो उस समय चेयरमैन थे, वहाँ उपस्थित महिला समूह को इंगित करते हुये बोले कि आप सभी को केलकर साहब का धन्यवाद करना चाहिए कि वो एक से बढ़ कर एक नायाब हीरे जो बाहर की खानों में बिखरे पड़े थे, चुन-चुन कर आपके लिए लाये हैं। तब कार्यक्रम ठहाकों से गूंज उठा। हर एक से मिलना, उनके हाल-चाल लेते रहना केलकर साहब की विशेषता थी। वहीं मुथन्ना साहब सख्त थे लेकिन हृदय के बड़े साफ थे। दोनों के मध्य अच्छा सामंजस्य था। केलकर साहब सन 1959 से सन 1970 तक यहाँ रहे। निदेशक के तौर पर दो कार्यावधि उन्होने सफलतापूर्वक पूर्ण की और संस्थान को वैश्विक पहचान दिलाई। उप-निदेशक के रूप में मुथन्ना साहब पूरे समय केलकर साहब के साथ रहे। केलकर साहब के बाद मुथन्ना साहब ही संस्थान के निदेशक बने लेकिन अपरिहार्य कारणों से उन्हें अपना कार्यकाल मध्य में ही छोड़कर जाना पड़ा। मैं कहूँगा कि संस्थान के प्रति मुथन्ना साहब का लगाव विशिष्ट था और यही कारण था कि केलकर साहब उनको बहुत मानते थे। बातों ही बातों में थपलियाल अंकल ने यह भी बताया कि मुथन्ना साहब जनरल करिअप्पा के भांजे थे।

एक बार प्रो. केलकर अपने दो वीआईपी मेहमानों के साथ खाने पर गेस्टहाउस आए। उस समय हमारे कुक भारतीय एवं कॉन्टिनेन्टल दोनों प्रकार के भोजन पकाने में दक्ष हुआ करते थे। एक कुक हरीसिंह जी ने तो विदेशियों के साथ भी काम किया हुआ था। यद्यपि स्वास्थ्य के प्रति अत्यंत सजग केलकर सर तो शुद्ध शाकाहारी थे और दही एवं चावल जैसा सादगी से भरा उनका भोजन था। वे रोटी इत्यादि भी कम ही खाते थे। जब उन्होने मेहमानों के लिए भारतीय भोजन के साथ-साथ कुछ विशेष पकाने को कहा तो कुक हरीसिंह जी ने एक विशेष कॉन्टिनेन्टल बनाने के लिए मसाला इत्यादि तैयार किया, जिससे कुल पाँच पीस ही बन सके। मैंने हरीसिंह जी से कहा कि थोड़ा छोटा आकार कर के कम से कम छह पीस तो बनाते भाई .....तो उसने कहा कि अब कुछ नहीं हो सकता है। इसे बनाने में बहुत समय लगता है। उन्होंने तर्क दिया कि केलकर साहब तो कुछ खाते ही नहीं फिर क्यों चिंता कर रहे हैं .....? मैंने कहा गुरू डॉट तो मुझे खानी ही पड़ेगी क्योंकि मैं इतने दिनों में निदेशक साहब को अच्छी तरह समझ गया हूँ ...। दूसरी ओर उधर आगंतुक मेहमानों को यह कॉन्टीनेंटल बहुत ही अच्छा लगा। उन्होने निदेशक महोदय से यहाँ तक कह दिया कि यह भोजन आमतौर पर हर कोई नहीं बना पाता और आपके कुक तो मंजे हुये प्रतीत होते हैं। इस पर केलकर साहब ने हाँ कहकर एक सामान्य सी प्रतिक्रिया दी। वहाँ उपस्थित तीनों लोगों ने एक-एक पीस खा लिया था और दो पीस जैसे के तैसे पड़े हुये थे। यदि तीन पीस बचे होते तो संभवतः आए हुये दोनों मेहमान एक-एक पीस और लेते। वहाँ कॉन्टिनेन्टल के अतिरिक्त अन्य भोजन भी था सो सभी खाकर चले गए और केलकर साहब ने मुझे कुछ कहा भी नहीं । आखिर शाम को उन्होने मुझे बुला भेजा "नारायणदत्त आज मेरा खाना ले के तुम आना। डोंट सेंड एनी बडी। मेरे को बहुत भूख लगी है...।"

जो आदमी सुबह से शाम तक न के बराबर खाता हो वो कहे कि भूख

लगी है? मैं समझ गया और हरीसिंह के पास जाकर बोला कि आज तुम्हारे कारण मुझे डांट पड़ने वाली है । खैर जो भी हो! मैं शाम को उनका खाना लेकर बंगले पर पहुंचा तो वो बोले कहाँ है खाना... जल्दी से दो ... बड़ी भूख लगी है ...?

मैं उनका मूड समझ गया था। उनसे खुलकर बोल भी लेता था, कहा सर आपको तो कभी भी इस तरह से भूख नहीं लगी ... मैं समझ गया हूँ कि आज आपने मुझे क्यों बुलाया है ... "मेरी गलती नहीं है। मैंने तो छह पीस बनाने को कहा था लेकिन हरीसिंह ने कहा कि मैनेज हो जाएगा क्योंकि आप तो खाते ही नहीं ...। "

तब केलकर साहब बोले ये आप को पता है न कि मैं नहीं खाता, मेहमानों को तो नहीं पता न ....। वो तो मेरे कारण नहीं खा पाये जबकि उनको बहुत रुचिकर लगा ...। कोई बात नहीं आइंदा से ये ध्यान रखो कि कुछ भी बनाओ तो मेहमान के सामने सारे बर्तन अच्छी तरह से भरकर रखो ...। इट्स गुड इफ यू केन यूस द लेफ़्टोवर फूड सम वे ...। किन्तु घर आए मेहमान को संकोच की अवस्था में डालना उचित नहीं है ...। आगे से मैंने उनकी इस बात का हमेशा ध्यान रखा। कहकर थपलियाल अंकल ने अपनी बात समाप्त की।

विशिष्ट उपलब्धियों के लिए केलकर सर को विश्व भर में सम्मान मिला। तकनीकी शिक्षा में अभूतपूर्व योगदान के लिए भारत सरकार द्वारा सन 1969 में उन्हें पद्म-भूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया। इलेक्ट्रिकल इंजीनियर्स इंस्टीट्यूट ऑफ लंदन और इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेज, बैंगलोर, भारत के फेलो चुने गए। सन 1981 में, आई.आई.टी. कानपुर ने उन्हें डॉक्टर ऑफ साइंस की मानद उपाधि से सम्मानित किया। उनकी उपलब्धियों की मान्यता कई महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदों यदा 1969 में कॉमनवेल्थ इंटर-यूनिवर्सिटी बोर्ड ऑफ इंडिया के अध्यक्ष, सरकार समिति के सदस्य, भारतीय विज्ञान संस्थान, बैंगलोर के शासी बोर्ड आदि के रूप में दिखाई देती है। सन 1971 में, द इंस्टीट्यूशन ऑफ इलेक्ट्रिकल इंजीनियर्स, लंदन ने अपनी शताब्दी मनाई जिसमें केलकर सर दुनिया भर से आमंत्रित छह वक्ताओं में से एक थे। अक्टूबर 1990 को मुंबई में केलकर सर का निधन हुआ।

निस्संदेह आज देश-विदेश में राष्ट्र-ध्वज का मान रखने वाला हमारा आई.आई.टी. कानपुर केलकर सर की दूरदर्शिता का ही परिणाम है। संस्थान के हीरक जयंती वर्ष पर हम सर पी. के. केलकर जैसे अनुकरणीय व्यक्तित्व को सादर नमन करते हैं।

इस लेख के माध्यम से मैं, अध्यक्ष, हीरक जयंती, प्रोफेसर समीर खांडेकर का विशेष रूप से आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी प्रेरणा एवं सहयोग से एक ऐसी श्रंखला का शुभारंभ किया गया है, जो समय-समय पर अंतस के माध्यम से पाठकों का हमारे संस्थान के विशिष्ट व्यक्तियों से परिचय कराती रहेगी। और इनसे प्राप्त ऊर्जा के साथ हम सभी अपने संस्थान को एक नई दिशा दे सकेंगे। इस संबंध में समस्त पाठकों से आग्रह है कि यदि आपके पास भी ऐसे ही विशिष्ट एवं स्मरणीय अनुभव हैं, जिन्हें आप साझा करना चाहते हैं तो आप प्रा. समीर खांडेकर से सम्पर्क कर इस सृजन कार्य में अपना सहयोग अवश्य दें।

प्रस्तुतिः सोमनाथ डनायक

यह लेख भा. प्रौ. सं. बॉम्बे, भा. प्रौ. सं. कानपुर, विकीपीडिया एवं विशेष रूप से हमारे संस्थान के कर्मचारियों के अनुभवों पर आधारित है, जिसमें तथ्यों की यथार्थता हेतु सावधानी बरती गई है। तथापि यह प्रामाणिक दस्तावेज़ होने की पुष्टि नहीं करता।

संस्थान के कर्मचारी संगठन द्वारा हीरक जयंती पर विविध आयोजन

भारतीय प्रोद्यौगिकी संस्थान कानपुर को सफलता के नवीन शिखरों पर पहुंचाने में यहां के संकाय सदस्यों, छात्रों एवं कर्मचारियों का महत्वपूर्ण योगदान है। संस्थान अपने कर्मचारियों के हितों की रक्षा करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है तथा संस्थान स्तर पर कर्मचारी संगठन नाम की संस्था, कर्मचारियों के सर्वांगीण विकास के लिए संस्थान प्रशासन के साथ मिलकर क्रियारत है। संस्थान के हीरक जयंती समारोह में भी हर कर्मचारी की भागीदारी एवं महत्व को सुनिश्चित करने के लिए अनेक प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है।

हीरक जयंती समारोह के चेयरमैन प्रोफेसर समीर खांडेकर के यत्नों से तथा कर्मचारी संगठन के तत्वाधान में अनेक कार्यक्रमों तथा प्रतियोगिताओं के आयोजन के माध्यम से कर्मचारियों की प्रतिभा का विकास एवं उनके अंदर निहित कला को खुले मंच पर लाने का उद्यम किया गया। कार्यक्रमों में कर्मचारियों की भारी संख्या में प्रतिभागिता इस बात को सिद्ध करती है कि संस्थान में उच्च गुणवत्ता का कर्मचारी वर्ग मौजूद है तथा जो दिए गए उद्देश्य एवं लक्ष्य को पूर्ण करने की सामर्थ्य रखता है। संस्थान द्वारा अपने कर्मचारियों की लगन एवं निष्ठा की भावना को हीरक जयंती समारोह के कार्यक्रमों में विशेष स्थान दिया गया। कर्मचारियों ने हीरक जयंती समारोह में न केवल बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया वरन अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन भी किया तथा प्रतियोगिताओं में ऐसा लग रहा था कि मानो कर्मचारी अपना सर्वोत्तम करने की ठाने हुए हैं। संस्थान ऐसे अनुभवी तथा कर्मठ कर्मचारियों पर गर्व महसूस करता है तथा ऐसे ही कर्मचारियों की बदौलत संस्थान नित नई ऊंचाइयों को छूता है इसमें कोई संदेह नहीं है। संस्थान द्वारा कर्मचारियों की लगन एवं उनके निष्ठा भाव को संस्थान के द्वारा ऐसे समय पर सम्मानित किया जाना वास्तव में उनका उत्साहवर्धन करता है जिससे अन्य कर्मचारी भी प्रेरित होते हैं तथा अपना सर्वोत्तम प्रदर्शन संस्थान तथा राष्ट्र हित में करने के लिए प्रेरित होते हैं। संस्थान का तकनीकी वर्ग विभागों की अनेक कार्यशालाओं में शोध-कार्य तथा प्रयोगशालाओं का समुन्नत संचालन करता है तथा अपने मजबूत तकनीकी पक्ष के कारण विश्व स्तरीय शोध-कार्य में अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान देते हैं। इसी प्रकार से शैक्षणिक कार्यों को संस्थान का लिपिक वर्ग बहुत तन्मयता एवं उत्तरदायित्व के साथ संपादन करता हैं। संस्थान के तकनीकी तथा लिपिक वर्ग के कर्मचारियों के हुनर को ध्यान में रखते हुए हीरक जयंती समारोह में कुछ प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिसमें कर्मचारियों को ऐसा अवसर प्रदान किया गया जिसमें वे अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन सकें। संकाय सदस्यों के निर्णायक मंडल के द्वारा चयनित कर्मचारियों को संस्थान के उच्च पदाधिकारियों के द्वारा सम्मान प्रदान किया गया।

स्वर्ण, हीरक जयंती समारोह या अन्य किसी विशेष आयोजन में आईआईटी कानपुर में कर्मचारियों के लिए इस प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन पहली बार फलीभूत हुआ है जिसके लिए कर्मचारी संगठन के पदाधिकारियों तथा कर्मचारियों ने प्रोफेसर समीर खांडेकर के प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा यह आशा भी व्यक्त की गई कि भविष्य में भी इस प्रकार की सहभागिता आधारित कार्यक्रमों का आयोजन होता रहेगा क्योंकि इससे संस्थान की अद्वितीय सामाजिक पहचान सबल होती है।

कर्मचारी संगठन के कार्यक्रमों का आयोजन तथा प्रबंधन प्रोफ़ेसर मुकेश शर्मा जी के निर्देशन में किया गया तथा परिणाम स्वरुप यह कार्यक्रम अपने उद्देश्य को पूर्ण करने में सफल हुआ। हीरक जयंती समारोह में साल भर होने वाले कार्यक्रमों का सिलसिला अभी शुरू हुआ है जिसमें प्रमुख प्रतियोगिताओं का विवरण यहाँ पर देना न्यायोचित है।

1. कर्मचारी संगठन के लोगो (LOGO) डिजाइन की प्रतियोगिता

कर्मचारी संगठन का लोगो बनाने के लिए एक प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिससे कि कर्मचारियों के कंप्यूटर क्षमता तथा संगठन के बारे में जानकारी को परखा जा सके। कर्मचारी संगठन का पुरस्कृत लोगो इंगित करता है कि कर्मचारी संगठन का संस्थान एवं कर्मचारियों के लिए महत्व है तथा इसको और अधिक असरकारक बनाया जा सकता है। इस प्रतियोगिता में संस्थान के लिपिक वर्ग ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया तथा इस प्रतियोगिता में प्रतिभागियों ने अपने-अपने कम्प्यूटर कौशल का प्रदर्शन किया। भाग लेने वाले कर्मचारियों की संख्या 34 रही। इस प्रतियोगिता में प्रोफेसर रित्विक भट्टाचार्य, प्रोफेसर आलोक बाजपेई व श्री अंजनी कुमार निर्णायक मंडल के सदस्य थे।

प्रथम स्थान के लिए श्री सौरभ मल्होत्रा (COMPUTER SCIENCE& ENGG) द्वारा बनाये गये लोगो को चुना गया। चयनित लोगो में कर्मचारी वर्ग की एकता, कल्याण, शान्ति तथा देशभक्ति को प्रदर्शित करता है। द्वितीय स्थान सुश्री शहाना सुल्ताना (P K KELKAR LIBRARY) तथा तृतीय स्थान श्री अनूप सिंह (ADMINISTRATION SECTION) के डिजाइन को मिला।

मॉडल प्रतियोगिता

मॉडल प्रतियोगिता में कुल 11 टीमों ने हिस्सा लिया तथा अपने मॉडलों का प्रदर्शन किया। मॉडल प्रतियोगिता के निर्णायक मंडल में प्रोफेसर विवेक वर्मा भी, जी पी बाजपेई व श्री रामानुज रहे।

श्री अनिल कुमार वर्मा, श्री इन्द्रपाल सिंह एवं श्री राकेश कुमार (पदार्थ विज्ञान विभाग) ने निदेशक आवास का शानदार मॉडल बनाकर प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पाने का सम्मान प्राप्त किया।

निदेशक आवास का मॉडल

द्वितीय स्थान श्री नृपेन डेका(पदार्थ विज्ञान विभाग), श्रीमती संगीता सिंह (विद्युत अभियांत्रिकी विभाग), श्री भरत सोमैया (कम्प्यूटर सेन्टर) एवं श्री संदीप बोरा (सिविल अभियांत्रिकी विभाग) की टीम को मिला जिन्होनें चन्द्रयान का खुबसूरत माडल बनाया।

तृतीय स्थान केन्द्रीय कार्यशाला के श्री अनिल कुमार झा, श्री मन्नीलाल, श्री शिबनाथ पाल श्री जितेन्द्र कुमार शर्मा एवं श्री वीरेन्द्र टाक की टीम को हासिल हुआ।

वाद-विवाद प्रतियोगिता

वाद-विवाद प्रतियोगिता में कुल चार टीमों ने हिस्सा लिया, हर एक टीम में तीन सदस्य थे। टीमों ने अपने वाद विवाद कौशल का उम्दा प्रदर्शन किया। प्रतियोगिता प्रोफेसर कांतेश बालानी, प्रोफेसर आशुतोष तिवारी, सोमनाथ डनायक व श्री रामकृष्ण निर्णायकों की भूमिका में थे। प्रतिभागियों ने डिजिटल इंडिया व मोबाइल फोन के उपयोग जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर अपने-अपने विचार जोरदार ढंग से रखे।

प्रथम स्थान केमेस्ट्री विभाग के श्री सुरेन्द्र, श्री प्रतीक शुक्ला एवं श्री दीपांकर सिंह की टीम को दिया गया। श्री वीरेन्द्र सिंह (4i) , श्री दीपक उबाले (केमेस्ट्री विभाग) एवं श्री राजाबाबू (केमेस्ट्री विभाग) की टीम को द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ। वाद-विवाद बहुत सार्थक रहा एवं सभी टीमों ने डिजिटल इंडिया व मोबाइल फोन के बढते उपयोग के बारे अपनी बात को मंच पर रखा।

सांस्कृतिक कार्यक्रम

कर्मचारी संगठन द्वारा अपने स्थापना दिवस '28 अक्टूबर' को धूमधाम से मनाया गया तथा अपने स्थापना के उद्देश्यों को याद करने की परम्परा का निर्वाह किया। सत्तर के दशक में प्रोफेसर ए पी शुक्ला, प्रोफेसर बसंत सरकार तथा मजदूर चिंतकों श्री आर के तिवारी, श्री आर के शुक्ल, आदि के अथक प्रयासों व मजदूर शिक्षण के नतीजों से संगठन का पोषण हुआ था। स्थापना दिवस उन्ही मजदूर हितों के संरक्षण हेतु की गई लम्बी जद्दोजहद की याद कराता है।

संस्थान की हीरक जयंती के अवसर पर कर्मचारी संगठन के वार्षिकोत्सव तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन संस्थान के प्रेक्षागृह में हुआ, जिसमें संस्थान के निदेशक श्री अभय करंदीकर मुख्य अतिथि के रूप में शामिल हुए। सांस्कृतिक कार्यक्रम की शुरुआत गणेश वंदना के साथ की गई। निदेशक महोदय और कर्मचारी संगठन के पदाधिकारियों द्वारा दीप प्रज्वलन करके कार्यक्रम का विधिवत शुभारंभ किया गया। प्रोफेसर करंदीकर ने कर्मचारी संगठन को शुभकामनाएं देते हुए आगे निरंतर विकास के लिए आगे बढ़ने को प्रेरणा भी दी।

इसके अलावा कर्मचारी संगठन द्वारा अपने स्थापना दिवस के शुभ अवसर पर विश्वप्रसिद्ध जादूगर श्री ओ पी शर्मा एवं उनकी टीम के मैजिक शो का आयोजन कराया गया। खचाखच भरे हुए ऑडिटोरियम

में संस्थान के संकाय सदस्यों, अधिकारीगण, कर्मचारियों और छात्रों ने सपरिवार कार्यक्रम का भरपूर आनन्द उठाया।

समाज में प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिभागिता महत्वपूर्ण होती है तथा उसे अवसर प्रदान करने के निश्चित उपादान होते हैं। संस्थान के हीरक जयंती समारोह में कर्मचारियों ने अपनी प्रतिभा प्रदर्शन करके इस तथ्य को उजागर किया है कि अवसर आने पर वे अपनी प्रतिभा का सार्वजनिक प्रदर्शन भी कर सकते हैं। निश्चित रूप से इन कार्यक्रमों के आयोजन से संस्थान के कर्मचारियों के उत्साह में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। अनेक कार्यक्रमों की इस श्रंखला में संस्थान के कर्मचारियों ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया जिससे स्पष्ट होता है कि कर्मचारी संस्थान से जुड़े हुए किसी भी कार्य को पूर्ण निष्ठा एवं सम्मान के साथ स्वीकार करते हुए अपना दायित्व निर्वाह करते हैं। कर्मचारियों का उत्साह ऐसा लग रहा था कि मानो वे संस्थान के प्रत्येक महत्वपूर्ण क्रियाकलाप का हिस्सा हैं तथा वे स्वयं को गौरवान्वित महसूस करके अपने उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य के प्रति और अधिक केंद्राभिमुख होते हैं जो संस्थान के विकास एवं उन्नति के लिए आवश्यक गुणक है।

अंत में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संस्थान स्तर पर कर्मचारियों की भारी संख्या में भागीदारी, कर्मचारी तथा संस्थान हित को इंगित करते हैं। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य नवीन ऊर्जा का संचार, नए विचारों की सर्जना तथा पारस्परिक सहभागिता जैसे मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं का निर्वहन करना है, जो संस्थान के विकास में अपना योगदान और अधिक बढ़ाने की प्रेरणा स्रोत है।

निःसंदेह इन आयोजनों से संस्थान के कर्मचारियों का उत्साह तथा पारस्परिक कौशल प्रदर्शन का जज्बा देखने को मिला है जो संस्था के विकास के लिए न केवल महत्वपूर्ण है बल्कि अनिवार्य भी है। हीरक जयंती के अवसर पर प्रोफेसर समीर खांडेकर द्वारा किया गया यह प्रयत्न वास्तव में कर्मचारियों में एक नई प्रकार की विकासोन्मुखी सोच पैदा कर रहा है।

हीरक जयंती संयोजक समिति के सौजन्य से

डायरी

भर गयी मेरी डायरी
कुछ सुनहरे सपनों से
कुछ बड़े बड़े वादों से ,
कुछ खट्टी मीठी यादों से
मलाल है उन वादों का
जो हमने पूरे न किये
खयाल है उन रिश्तों का
जो अनचाहे टूट गये
कुछ दर्द है उन ख्वाइशों का
जो चादर से बड़ी थीं
भर गई मेरी डायरी
जीवन के अलग अलग किरदारों से
कभी बेटी थी,कभी मां बनी
कभी बहू थी कभी सास बनी
हमारे किरदार बदले
मन के भाव नहीं बदले
वही ममता थी,वही प्यार था
समय के साथ अलग अहसास था
कुछ खुशी है कुछ गम है
जितना लिखूं वह कम है
एक स्त्री मन के विभिन्न किरदारों से
भर गई है डायरी मन के भावों से ।

पूजा मिश्रा

न जाने क्यों कोई कभी-कभार ही पूछता है, 'क्या आई आई टी कानपुर देश की अन्य शिक्षण संस्थाओं से भिन्न है? और यदि भिन्न है तो क्यों?' यह दोनों प्रश्न शाश्वत हैं किन्तु इनके उत्तर समय, काल, संदर्भ तथा व्यक्ति विशेष के परिप्रेक्षानुसार बदल सकते हैं। और उत्तर यदि हां है, तो प्रश्न उठता है कि क्या आई आई टी प्रणाली अन्य शिक्षण संस्थाओं की प्रणाली से भिन्न है?

निदेशक क्या कहते हैं?

करीब अट्ठारह वर्ष पूर्व मुझे दोपहर के भोजन पर छः आई आई टी के निदेशकों से मिलने का अवसर मिला। मैं उस समय आई आई टी कानपुर में संयुक्त प्रवेश परीक्षा के अध्यक्ष का कार्यभार देख रहा था। निदेशकों का एकसाथ मिलना भी प्रवेश परीक्षा से सम्बंधित था। कुछ समय पूर्व ही मैंने आई आई टी कानपुर के निदेशक प्रोफेसर के ए पद्मनाभन की उन्हें कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय द्वारा दिए गए 'डिग्री ऑफ़ एस सी डी' के सर्वोच्च सम्मान से सम्बंधित एक साक्षात्कार की वीडियो रिकॉर्डिंग की थी। उस साक्षात्कार में उन्होंने कहा कि आई आई टी शिक्षा विज्ञान आधारित है जिसमें छात्र केवल 'कैसे करना है' ही नहीं सीखते, वे यह भी सीखते हैं कि 'क्यों करना है'। इसके अलावा विज्ञान, तकनीकी तथा मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान की एकीकृत शिक्षा छात्रों का बहुआयामीय विकास करने हेतु प्रासंगिक तथा अति लाभकारी है।

प्रोफेसर पद्मनाभन के साक्षात्कार के पश्चात मुझे लगा कि यदि छः निदेशक आई आई टी शिक्षा प्रणाली के बारे में बात कहेंगे तो एक व्यापक राय और समझ सामने आयेगी। मेरे इस विचार से लगभग सभी निदेशक सहमत थे। किन्तु न जाने क्यों एक निदेशक महोदय को अचानक लगा कि इस प्रकार के वीडियो से, 'कहीं हम किसी नियम का उल्लंघन तो नहीं कर देंगे?' (मैंने उनके कथन को यहाँ सांकेतिक रूप में रखा है।) बहरहाल, इस सन्दर्भ में वीडियो बनाने का एक सुनहरा अवसर मैं गवां चुका था। मुझे विश्वास था कि ऐसा अवसर दोबारा नहीं मिलेगा। भोजनकाल समाप्त होते-होते मैं उस प्रकरण को पूर्णतया भूल चुका था।

अपने कार्यकाल में मुझे लगभग सभी निदेशकों के साथ किसी न किसी प्रशासनिक पद पर कार्य करने का संयोग मिला। उनमें से प्रत्येक किसी न किसी विलक्षणता के धनी हैं। उनके सानिध्य में आप बहुत कुछ नया सीख सकते हैं। इस लेख को सीमित रखने के उद्देश्य से यहाँ केवल कुछ सन्दर्भों का उल्लेख ही ठीक रहेगा। मुझे याद है कैसे प्रोफेसर आर सी मल्होत्रा ने संयुक्त प्रवेश परीक्षा (जेईई) से सबंधित निदेशको की एक सभा (जिसमे सम्बंधित मंत्रालय के एक प्रतिनिधि ने कुछ सुझाव लगभग निर्देश के रूप में रखे थे) में दृढ़ता से कहा कि संयुक्त प्रवेश परीक्षा वैसे ही चलेगी जैसे आईआईटी चलाती है। यह अपनी इकाइयों में कार्यरत प्राध्यापकों तथा अन्य कर्मियों में एक निदेशक के विश्वास को दिखाता है। ऐसे विश्वास के मूल कारणों में एक गूढ़ सोच-विचार तथा समझदारी से लिए गए निर्णय होते हैं। इस प्रकार के सन्दर्भों से उन इकाइयों को भी अपना कार्य सुचारू तथा पूर्ण क्षमता से करने का बल मिलता है। जिन छात्रों को आई आई टी शिक्षा देगी, निस्संदेह उन उम्मीदवारों को चयनित करना पूर्ण रूप से आई आई टी के अधिकार क्षेत्र में आता है।

यूँ तो प्रत्येक निदेशक के कथनों में कुछ गूढ़ सन्देश होता है। किन्तु वक्तव्य में अवश्य ही भिन्नता होती है। अनेक बार मैंने प्रोफेसर संजय गोविन्द धांडे को आई आई टी कानपुर से बाहर के लोंगों से कहते सुना है, 'हम सबसे अलग हैं, क्योंकि हम कुछ टेढ़े हैं। निसंदेह उन लोगों को यह समझ आ जाता है कि आई आई टी कानपुर किसी लकीर-का-फकीर नहीं है। आई आई टी कानपुर में लोग दूसरों के बनाये रास्तों पर नहीं चलते, बल्कि वे अपनी बनाई लकीर को भी बदलते रहते हैं। अपने संस्थान में हो रहे अध्यापन-अध्ययन परिप्रेक्ष, शोध-कार्य तथा प्रशासनिक कार्यप्रणाली को सटीक रूप में कहने का इससे नायाब तरीका शायद ही हो सकता है।

पारदर्शिता एवं सम्मान का भाव

मैं समझता हूँ कि किसी भी संस्थान, विशेषकर शिक्षण संस्थान में, पारदर्शिता, समानता तथा परस्पर सम्मान उस संस्थान को विशिष्ट स्थान दिलाते हैं। आई आई टी कानपुर में यह सब सहज ही हर स्तर पर देखा जा सकता है। यहाँ भिन्न स्तरों पर कार्यरत प्राध्यापकों में कोई भेदभाव नहीं किया जाता; शिक्षण में कार्यरत प्रत्येक व्यक्ति फैकल्टी मैम्बर है। सहकर्मियों को समानता का अधिकार तथा उस अधिकार का अनुभव कराना अपनेआप में महत्वपूर्ण तथा प्रेरणादायक है।

आई आई टी कानपुर में अकादमिक अथवा प्रशासनिक समितियों में प्राध्यापकों की भूमिका उनके पदक्रम अथवा अनुक्रम के अनुसार नहीं तय की जाती। अनेक समितियों में प्रोफेसर तथा एसोसिएट प्रोफेसर

सदस्य हो सकते हैं, जबकि असिस्टेंट प्रोफेसर को अध्यक्ष पद का भार दिया जा सकता है। समिति का ध्यान केवल श्रेष्ठ प्रासंगिक निर्णय लेने पर केन्द्रित होता है, न कि कौन किस पद पर बैठा है। जिन पाठ्यक्रमों में अधिक छात्र पंजीकरण करते हैं, उनमें असिस्टेंट प्रोफेसर प्रशिक्षक तथा प्रोफेसर ट्यूटर हो सकते हैं।

मूल्यांकन में पारदर्शिता तथा छात्रों का संस्थान स्तर की समितियों में भागीकरण उनकी आवाज़ को सुनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ-साथ टेककृति तथा अंतरागिनी जैसे छात्रों द्वारा संचालित कार्यक्रम उनके ज्ञान की वृद्धि करते हैं, सांस्कृतिक उत्थान में सहायक होते हैं तथा सामाजिक चेतना को बहुआयामी बनाते हैं। अनेक अन्य कार्यक्रम छात्रों का व्यक्तित्व विकास करते हैं तथा उन्हें प्रबंधन में कुशल बनाते हैं। परामर्श सेवा में वरिष्ठ छात्र समन्वयक तथा मार्गदर्शक के रूप में नए छात्रों की आई आई टी परिवेश को आत्मसात करने में सहायता करते हैं।

अपने अकादमिक अधिष्ठाता के कार्यकाल की समाप्ति के कुछ महीनों बाद मैं किसी सन्दर्भ में प्रोफेसर पद्मनाभन से मिलने उनके कार्यालय में गया। जैसे ही मैंने उनके कार्यालय में प्रवेश किया, उन्होंने कहा, 'प्रोफेसर शर्मा, यू आर दी नेक्स्ट जे ई ई चेयरमैन। अटेंड दी कमिंग मीटिंग ऑफ़ चेयरमेन'। फिर उन्होंने मीटिंग की तिथि बताई। यह मेरे लिए बिलकुल अनापेक्षित था। "सर, उस तिथि में मैं अपनी पत्नी के साथ एल टी सी पर जा रहा हूँ, पहली बार," मैंने कहा। 'कहाँ जा रहे हो?' "बम्बई"। 'मीटिंग आई आई टी बम्बई में है'। "सर, मुझे अपनी पत्नी से तो पूंछना है।" आखिर जे ई ई का पूरा चक्र अट्ठारह माह में समाप्त होगा। मैंने सोचा अब बच गया। प्रोफेसर पद्मनाभन ने सीधा मेरी पत्नी को फ़ोन कर दिया और कहा, 'मिसेज़ शर्मा, प्रोफेसर शर्मा को मैं जे ई ई चेयरमैन नियुक्त कर रहा हूँ। ठीक है न?'। क्या कहती मेरी पत्नी? और क्या करता मैं? प्रोफेसर पद्मनाभन मेरे ऊपर कुछ थोप नहीं रहे थे। वो चाहते तो एक आदेश दे कर भी मुझे जे ई ई अध्यक्ष बना सकते थे। किन्तु पूरी प्रक्रिया में मुझे शामिल करके वो कर्मचारी-सशक्तिकरण के सिद्धान्त का प्रभावी उपयोग कर रहे थे।

जे ई ई 1991 के लिए मेरी और प्रोफेसर सोनक चौधरी की टीम में अच्छा तालमेल रहा। प्रोफेसर चौधरी जे ई ई के प्रत्येक कार्य में पूरी तत्परता और तन्मयता से तथा ध्यानपूर्वक अपना योगदान देते थे। मुझे लगता था आई आई टी प्रशासन उनकी इन विशेषताओं तथा विशिष्ट क्षमता का विशेष लाभ लेगा। एक दिन काफी-अंतराल में मैंने प्रोफेसर चौधरी से कहा, 'सोनक, जे ई ई में तीन प्रकार के अध्यक्ष होते हैं: भूतपूर्व/अभूतपूर्व, वर्तमान तथा दूर के सितारे। तुम क्षितिज में उदित होता एक ऐसा सितारा हो जो लम्बे समय तक चमकता रहेगा'। अंतराल में प्रोफेसर चौधरी ने अनेक वर्षों तक जे ई ई अथवा गेट के अध्यक्ष पद पर संस्थान को अपनी सेवाएं दीं। आई आई टी कानपुर प्रशासन की यह एक विशेषता है कि जब वह जान जाता है कि कौन आई आई टी के लिए पूरी क्षमता से कार्य कर सकता है, तो उस व्यक्ति के लिए प्रशासनिक चक्र से बाहर आना लगभग असंभव है।

मुझे निदेशक प्रोफेसर ए के मलिक से अनेक बार उनके कार्यालय में मिलने का अवसर मिला। वो सहज ही अत्यंत मृदुभाषी तथा सरल व्यक्तित्व के स्वामी हैं। उनसे प्रथम बार मिलने से पहले मैंने सुना था कि वो प्रत्येक आगंतुक को पूर्ण सम्मान देते हैं। जब मैंने उनके कार्यालय में प्रवेश किया तो वो अपने आसन से थोड़ा सा उठे और एक प्रकार से मेरा स्वागत किया। मुलाकात के अंत में वो मुझे अपने कार्यालय के द्वार तक छोड़ने आये। मैं समझता हूँ कि श्रेष्ठ पदासीन अधिकारी का अपने अधीनस्थों के साथ ऐसा सम्मानपूर्वक व्यवहार किसी भी कर्मी को संस्थान के लिए पूर्णरूपेण समर्पित रहने हेतु उत्साहित करता है।

संज्ञानात्मक चुनौतियाँ

आई आई टी कानपुर की ज्यामिति मुझे बहुत अच्छी लगती है। प्रोफेसर धांडे के शब्दों में कहूँ तो यहाँ की ज्यामिति भी कुछ टेढ़ी है। विभागों के सीमा चिन्ह तथा उनको जोड़ने वाले पथ और आवृत हर दिन नयेपन का आभास दिलाते हैं। उन पथ पर नेविगेशन सुखद अनुभव देता है। मुझे ऐसी ज्यामिति इसलिए भी अच्छी लगती है क्योंकि देहली विश्विद्यालय, जहाँ मैंने उच्च शिक्षा ली थी, के विभाग भी अधिकतर भिन्न भवनों में स्थित हैं। मुझे लेक्चर हॉल कॉम्प्लेक्स से मैटेरियल्स साइंस भवन के पीछे से जाने वाली संकरी, लहराती सड़क पर ड्राइव करना बहुत अच्छा लगता था। ऐसा लगता था मानो किसी पहाड़ी की संकरी सड़क अथवा गाँव के बीच से जा रहे हों। 10 किलोमीटर की गति से छोटी, किन्तु खुशनुमा ड्राइव!

किन्तु यही ज्यामिति कभी किसी के लिए संज्ञात्मक चुनौती भी हो सकती है। प्रोफेसर ए के शर्मा लगभग मेरे साथ ही आई आई टी कानपुर में आये थे। उन्हें यहाँ की ज्यामिति से तालमेल बिठाने में कुछ

समय लगा था। वो आई आई टी बम्बई से आए थे जहाँ विभाग सामान्यतः आयतानुकार आकृति में स्थित हैं: लम्बे सीधे गलियारे और उनसे लंबित आकार में जुड़े हुए भवन। आपको एक सीध में चलना है। मेरे विचार से उनका यही अनुभव आई आई टी कानपुर की ज्यामिति से मेल नहीं खाता था। बहरहाल, केवल चंद दिनों में ही प्रोफेसर शर्मा नेविगेशन में बिलकुल पारंगत हो गए थे।

आई आई टी कानपुर तथा आई आई टी बम्बई में मुझे एक समानता मिली। बम्बई में यदि आप मुख्य सड़क से अतिथिगृह कि ओर जायेंगे तो आपको पेड़ों की शाखाओं पर कौवे बैठे मिलेंगे। कानपुर में हॉल 1, 2 तथा 4 के मध्य की सड़कों पर लगे पेड़ों पर भी आपको कौओं के घोंसले मिलेंगे। आप यदि अति सवेरे की सैर पर इन पथों से निकलेंगे, तो सिर पर गिरने वाले सफ़ेद द्रव्य के द्वारा कौओं की चतुराई से लाभान्वित हो सकते हैं।

मेरे लिए एक अन्य प्रकार की चुनौती थी। मुझे अपने पहले ही सत्र में 'मनोविज्ञान एक परिचय' पढ़ाने के लिए दे दिया गया। वह मेरे लिए सबसे कठिन सत्र था। मैंने मनोविज्ञान में सीधे स्नातकोत्तर तथा निष्णात की उपाधियाँ प्राप्त की थीं। मुझे एक घंटे की कक्षा लेने के लिए तक़रीबन छः घंटे रोज़ पढ़ना पड़ता था। मैं समझ नहीं पा रहा था कि मैंने क्यों भौतिकी पढ़ाना छोड़ा।

शोध छात्रों की अपनी ही चुनौतियाँ हैं। जब हम उनका चयन करते हैं, तो वो बहुत अच्छे होते हैं। किन्तु जैसे ही वो अपना शोध पर्यवेक्षक चुनते हैं, तो हममें से कुछ कहने लगते हैं कि इस शोध छात्र को कुछ नहीं आता। छुपे रूप में वो कह रहे हैं कि इस छात्र का शोध मेरे कारण ही संभव है, उसमें कोई कुशलता नहीं है। मेरे विचार से यह हमारे अहम् को दर्शाता है। शोध छात्र भी सम्मान के उतने ही हकदार हैं जितना सम्मान हम अपने लिए चाहते हैं।

बहुरूपदर्शक

आई आई टी कानपुर में प्राध्यापक बहुप्रतिभा धनी हैं। वो अनेक खेलों में प्रतिभागिता करते हैं, प्रशासनिक कार्य करते हैं, पठन-पाठन करते है, और हाँ, श्रेष्ठ शोध करते हैं। यहाँ पर मैं एक विशेष प्रतिभा का सन्दर्भ देना चाहूँगा। करीब 20 वर्ष पूर्व मैंने एक कार्यक्रम, जिसका नाम मैंने दिया था 'एक शाम आवारा सी' करवाया था। वो पूरा कार्यक्रम संगीत-कला-गायन तथा कविता पाठ पर आधारित था। एक अति वरिष्ठ प्रोफेसर ने मुझसे कहा, 'शैक्षणिक संस्थान में यह "एक

शाम आवारा सी" क्या नाम हुआ?' बहरहाल, उस कार्यक्रम में बाला की ड्रमिंग, संजीव भार्गव का माउथ ऑर्गन बजाना, लीलावती कृष्णन का शास्त्रीय गायन, ए के शर्मा तथा आपके भवदीय का कविता पाठ एवं हरीश वर्मा का संचालन हर मायने में अव्वल था। लेक्चर हॉल 6 में तिल रखने कि जगह नहीं थी। कुर्सियों के अलावा लोग सीड़ियों पर बैठे थे और हर कोने तथा दरवाज़ों तक में खड़े थे।

'एक शाम आवारा सी' को परिवारों, छात्रों, प्राद्यापकों तथा संस्थान कर्मियों ने काफी सराहा था। मैं समझता हूँ उन अतिवरिष्ठ प्रोफेसर को भी वह कार्यक्रम पसंद आया होगा। विश्वास करिए, उस कार्यक्रम से छात्र वर्ग में एक खलबली सी मच गई। उस शाम के अगले दिन ही छात्रों की एक सांस्कृतिक संध्या थी। कुछ छात्र संजीव भार्गव (जो उस समय छात्र अधिष्ठाता थे) से मिले और कहा, 'सर आपने हमारे कार्यक्रम का कबाड़ा कर दिया'।

चलते-चलते

अनेक लोगों ने मुझसे यह प्रश्न किया है कि मैं कई वर्ष तक भौतिकी पढ़ाने के पश्चात मनोविज्ञान में क्यों आ गया। कुछ ही ने यह प्रश्न किया कि मैं मानविकी तथा समाजविज्ञान विभाग (एच एस एस) से औद्योगिक तथा प्रबंध अभियांत्रिकी विभाग (आई एम ई) में क्यों चला गया। एच एस एस में मेरे एक मित्र प्रोफेसर बी एन पटनायक कहा करते थे, 'मनी गोज़ व्हेअर मनी इज़, ब्रेन्स गो व्हेअर ब्रेन्स आर'। हल्की टिपण्णी करूँ तो, आई एम ई में मेरा योगदान अत्यधिक सकारात्मक था; मेरे उस विभाग में जाने के पश्चात उस विभाग में 'बाल्ड-हेड्स' तथा 'अर्ध-बाल्ड हेड्स' का घनत्व किसी भी अन्य विभाग से कहीं अधिक हो गया।

अभी इतना ही। शेष फिर कभी, यदि अवसर अथवा संपादक महोदय से संकेत मिला तो। •

प्रोफेसर नरेन्द्र के शर्मा

डर

डर है एक ऐसी कल्पना
जो पल में तुमको कल्पनाहीन बना देता है
तो डर है एक ऐसा एहसास
जो पलभर में शीतल छाँव को अंधेरा बना देता है
जो पल में तुमको दिल से अपाहिज बना देता है
तो डर है एक ऐसा भाव
जो पल में तुमको दिल से कमजोर बना देता है
तो डर है एक ऐसा ख्याल, जो अपनों को अपनों से दूर कर देता है।
न जाने क्यूं तू इतना डरता है,
कुछ करने से पहले इतनी बार क्यूँ मरता है,
डर तो एक मानसिकता है, जो कभी भी बदली जा सकती है,
मगर ना जाने तू इसी के साये में जीना क्यूं पसंद करता है।
भयभीत करो ऐसे डर को, आगे से सामना करो इसका,
और हौसलाकर कुछ भी कर दिखाने का तभी मिलेगा तुमको,
जब जीत लोगे तुम अपने ही डर को,
मारके एक आत्मविश्वास का मुक्का
परिश्रम का मूल और परिश्रम करने की ताकत,
तभी मिलेगी तुमको
जब खुद डराओगे
उस अंदरूनी कमजोर डर को ।

राहुल रंजन
रसायन अभियांत्रिकी विभाग

मुक्तिदायी ज्ञान

ग्यान, मान जहँ एकउ नाहीं।

ज्ञान वह है जिसमें एक भी मान नहीं है। मान का अर्थ है अभिमान। जाति का अभिमान, कुल, रूप, बल, विद्या, पद का अभिमान, स्वजनों का अभिमान, यश, जप-तप, ध्यान-ज्ञान का अभिमान और निरभिमानता का अभिमान-अनेक प्रकार का अभिमान होता है। इनमें से कोई भी अभिमान जहाँ नहीं है, वहाँ आत्मज्ञान है।

पुस्तकों के अध्ययन से सूचनाएं एकत्र होती हैं, आत्मानुभवी महापुरुष से ही आत्मानुभव प्राप्त होता है। वही दुखनाशक ज्ञान है, मुक्तिदायी ज्ञान है।

संत तुलसीदास

मां सरस्वती के संस्थान की गोद में मेरी यादों का सिलसिला 15 अक्टूबर 1980 को मेरे साक्षात्कार से शुरू हुआ । दो प्रश्नों का सटीक उत्तर (डायबिटीज ग्रसित TB के रोगी का इलाज़, WHO Recommended मलेरिया के इलाज़ का तरीका) और मैं चयनित हो गया ।नियुक्तिपत्र गलत नाम से पोस्ट हुआ और लौट गया । फिर मैंने उसे स्वयं प्राप्त किया और 20 नवंबर 1980 को स्वास्थ्य केन्द्र में डॉ एम बी बोरवनकर CMO को ज्वॉनिंग दे दी और मैं तीन दशक और तीन वर्ष की इस स्वर्णिम यात्रा पर निकल पड़ा ।

1980-1990 प्रथम दशक

20 नवंबर 1980 को ड्यूटी जॉइन करने के तीसरे ही दिन कार्यवाहक निदेशक डॉ वेंकेटेश्वर लू अपने दल बल के साथ स्वास्थ्य केन्द्र पधारे और निरीक्षण उपरांत उसी कमरे और उसी कुर्सी पर बैठ गए जो मुझे आवंटित की गयी थी । बात छोटी सी है पर यह मेरे आई आई टी में रोमांच की शुरुआत थी ।

उस दशक की आई आई टी की कुछ विशेषताएं मैं लिखना चाहूँगा ।

1. उस समय बड़े बड़े संकाय सदस्य अत्यंत सरल हृदय और सादगी-भरा जीवन जीते थे । ज्यादार लोग साईकल से या पैदल ही घर से आफिस आते जाते थे।

2. वरिष्ठतम लोग हम युवा कनिष्ठतम लोगों को भी सामाजिक जीवन मे अत्यंत स्नेह और बराबरी का दर्जा देते थे। हमें अपने घरों में आमंत्रित करते थे । कुछ नाम तो मैं जरूर लेना चाहूंगा डॉ सिंगरु, डॉ ज्ञान मोहन, डॉ टी एम श्री निवासन, डॉ रामशेषन, डॉ दयारत्नम, डॉ नरेश दयाल, डॉ ए पी वेंकेटेश्वरन, डॉ सरीन, श्री एस सी गोयल आदि आदि। कितना प्यार मुझे और मेरे परिवार को इन लोगों और अनेक नाम जो मैं भूल रहा हूँ, से मुझे मिला मैं बयान नहीं कर सकता।

इस दशक में मुझे और मेरे परिवार को विशेष स्नेह मिला तत्कालीन निदेशक प्रोफेसर संपत और उनकी पत्नी से। उनके पूरे परिवार को चिकित्सक की भांति सेवा देना मेरा ऑफिशियल उत्तरदायित्व था परंतु उनका मुझ पर अत्याधिक व्यक्तिगत स्नेह और विश्वास सदैव याद रहेगा। संपत परिवार स्वयं मेरा आरक्षण करवा कर अपने साथ अपनी पुत्री जयश्री के विवाह में मद्रास और फिर कडलूर ले गए यह बहुत बड़ी बात थी। एक बार संपत जी मेरे रामबाग के घर पहुंचे और मेरी वृद्ध माता जी से आंगन में बैठ कर बतियाये। ऐसे सरल हृदय लोगों का वह जमाना था । बाद में भी मुझे श्रीमती संपत के व्यक्तिगत पत्र मिलते।

3. संस्थान के कई युवा प्रोफेसर मेरे घनिष्ठ पारिवारिक मित्र बन चुके थे। कितनी बार मैं डॉ विजय गुप्ता, डॉ सुरेंद्र गुप्ता, डॉ रविन्द्र अरोरा, डॉ अश्विनी कुमार, डॉ एम पी कपूर , डॉ ए के जेना जैसे अनेकानेक लोगों के यहां पार्टी में बुलाया गया, मुझे याद नहीं। इन्हीं लोगों ने अनेक बार मेरे तत्कालीन पी रोड निवास पर जा कर हनुमान की चाट खाई होगी यह भी याद नहीं । पर याद केवल यह है कि वह समय पैसे से ज्यादा आपसी स्नेह और संबंधों को तरजीह देता था।

1990-2000 दूसरा दशक

इसी दशक में (अगस्त 91)मुझे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और यह दशक मेरी जीवन-यात्रा में अनेक खुशियां तो लाया, परंतु साथ ही व्यक्तिगत जीवन मे भी और संस्थान कार्यस्थल में भी विरोध, प्रतिरोध, प्रतिशोध, संघर्ष की लहरों में थपेड़े खाते हुए गुज़रा । मुझे वरिष्ठता के अनुसार डॉ बोरवनकर के रिटायर होने पर 31 जनवरी 1991 को कार्यवाहक मुख्यचिकित्साधिकारी की कुर्सी सौपीं गयी। मेरे कुछ हम उम्र साथियों को यह उम्मीद कभी न थी कि मेरे शहर निवासी होने कारण यह पद मुझे दिया जाएगा । बस यहीं से मैंने पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी से अपनी प्रशासनिक जिम्मेदारी प्रांरभ की और मेरे साथियों ने रोज़ मुझे असफल करने के नए नए हथकंडे अपनाये । सच कहूँ तो मैं परेशान रहा परंतु मेरी ईमानदारी और समर्पित भाव को समझते हुए संस्थान प्रशासन ने मुझे भरपूर समर्थन दिया और हौसला बढ़ाया।

मुझे कहते हुए फक्र है कि मैंने अपनी इस प्रशासनिक जिम्मेदारी पर रहते हुए कुछ अभिनव प्रयोग किये जैसे:

(अ) मुझे ऐसा लगता था कि मेरे साथी डॉक्टर रोज़मर्रा की उन्हीं छोटी मोटी बीमारियों और कैंपस परिसर के उन्हीं चिरपरिचित लोगों का इलाज़ करते करते एकरसता (मोनोटोनी) से कुंठित रहते हैं। मैंने एक Students Health Education Program परिकल्पित और प्रारंभ किया, उसे छात्रों के CPA में समायोजित कराया और सभी डॉक्टर्स के लिए मौका शुरू किया कि वे बारी बारी से स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न रोचक विषयों (फर्स्ट एड, रोगों से बचाव , हाइजीन इत्यादि) पर छात्रों को लेक्चर, मॉडल, ट्रेनिंग द्वारा जानकारी दें। इस कार्य के लिए एक पारिश्रमिक भी डॉक्टर्स को दिया जाने लगा, सभी ने सराहा परंतु कुछ वर्षों बाद यह कार्यक्रम ठंडे बस्ते में चला गया।

(ब) मैं सदैव यह सोचता था कि मैं अधीनस्थ कर्मचारियों पर अनुशासन थोपने के कठोर उपाय तो करता रहता हूँ पर अच्छे कार्य करने पर उन्हें कोई इनाम नहीं दे सकता। उन दिनों संस्थान 26 जनवरी को कुछ चुने कर्मचारियों को मेरिट इन्क्रीमेंट देता था परंतु 2-3 वर्ष कोई भी स्वास्थ्य केंद्र कर्मचारी न चुने जाने के क्षोभ ने मुझे एक परिकल्पना स्वयं सृजित करने और उस पर बढ़ने को विवश किया। इस प्रस्ताव को उस समय संस्थान प्रशासन के कर्ताधर्ताओं ने 'मुंगेरी लाल का हसीन सपना' जैसा सोचा परंतु मेरे दृढ़ता से लगे रहने पर कुछ वर्षों के अथक प्रयासों से स्वास्थ्य केंद्र ने अपने दो' इंडस्ट्री स्पॉन्सर्ड अवाड्र्स' स्थापित किये और प्रत्येक गणतंत्र दिवस पर झंडारोहण के बाद दो चुने हुए स्वास्थ्य केंद्र कर्मचारियों को निदेशक द्वारा दिए जाते रहे हैं।

स्वास्थ्य केन्द्र का मेरा 1991 से 1998 तक का सफर अत्याधिक विभागीय खींचातानी, टाँगखिचाई और रोज़मर्रा कृत्रिम समस्यओं से जूझते गुजरा और अंत में मैंने यह जिम्मेदारी छोड़ने का निर्णय ले लिया। प्रशासन कतई नहीं चाहता था परंतु मेरे अत्याधिक आग्रह पर मुझे 18 दिसंबर 1998 को प्रशासनिक जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया गया।

2001-2010 तीसरा दशक

यह दशक मेरे व्यक्तिगत जीवन मे नए परिवर्तन लाया

1. मैं 2002 और 2004 में पूरे उत्साह के साथ अपनी दोनो पुत्रियों के लिए सुयोग्य वर ढूंढ कर विवाह कर सका।

2. समय की उपलब्धता और मनोदशा की आवश्यकता के कारण मैं श्री शिरडी साईं और श्रीसत्य साईं की उपासनाओं और सेवा कार्यों में बढ़ चढ़ कर भागीदारी करने लगा। साप्ताहिक साईं मेडिकल सेवा, ग्राम प्रतापपुर हरि, निकट सिंहपुर शुरू हुई और संस्थान के अनेक संकाय सदस्य, छात्र और स्टॉफ के लोग इस पुनीत कार्य में बड़े उत्साह के साथ मेरे साथ हो लिए।

3. इस दौर में मेरे और मेरी पत्नी पूजा के लिए दो ऊर्जा केंद्र बहुमूल्य साबित हुए। राजभाषा प्रकोष्ठ के लोगों ने हम दोनों को बहुत उत्साहित किया और हमारी भागीदारी के लिए अपनी ओर खींचा। समय समय पर मेरी पत्नी को उनकी कविताओं को प्रस्तुत करने का मौका दिया। दूसरे प्रोफेसर हरीश वर्मा के द्वारा शिक्षा-सोपान की विभिन्न गतिविधियों के लिए हम दोनो समय समय पर सहभागिता के लिए आमंत्रित किये गए। दोनो मंचों ने जो हमें जो आत्मविश्वास और सम्मान दिया वह चिरस्मरणीय रहेगा।

2010-2013 के तीन वर्ष

यह काल मेरे आई आई टी कार्यकाल के केक पर सबसे सुंदर टॉपिंग साबित हुआ। इसी काल मे बिल्कुल न चाहते हुए और पूर्णतः लिखित रूप में निदेशक को मना करने के बावजूद परिस्थितयों से विवश होकर मुझे पुनः स्वास्थ्य केंद्र का 'प्रभारी चिकित्साधिकारी' और फिर ' प्रमुख चिकित्साधिकारी' के स्थायी पद पर आरूढ़ होना पड़ा। परंतु इस बार स्वास्थ्य केंद्र का वातावरण बहुत स्वस्थ हो चुका था और मैं पूर्ण संतुष्टि के साथ काम कर सका। इस बार की कुछ विशेष स्मृतियां यूँ हैं कि:

(1) 2010-11 में संस्थान का स्वर्ण जयंती वर्ष मनाया जा रहा था। उसी कड़ी में 6000 स्कूली बच्चों को आई आई टी परिसर में ओपन हाउस कार्यक्रम में आमंत्रित किया गया। मुझे संस्थान द्वारा केवल एक फर्स्ट एड सपोर्ट के लिए स्वास्थ्य केंद्र का स्टाल ऑडिटोरियम लॉन्स में लगाने को कहा गया। पर मेरी परिकल्पनाएं फिर से जोर मारने लगीं और स्वास्थ्य केंद्र की ओर से मीडिया सेंटर लॉन में एक विशाल प्रदर्शनी 'युवा भारत स्वस्थ भारत' का आयोजन किया गया। यह प्रदर्शनी 'किशोरावस्था से जनित समस्यों के कारण और निवारण' के

विषय पर आधारित थी । सभी आगंतुक स्कूली बच्चों को दिखाई गई और बहुत सराही गयी। इस कार्यक्रम में वीडियो फिल्म्स द्वारा भी बच्चो को जागरूकता और मोटिवेशन दिया गया।

(2) शायद कम ही लोग जानते होंगे कि तत्कालीन निदेशक प्रोफेसर धांडे ने दंडित छात्रों को मनोवैज्ञानिक सुधार के लिए एक 'पॉजिटिव पेनल्टी प्रोग्राम 'प्रारम्भ किया । मुझे उसका नोडल ऑफिसर बनाया । अधिष्ठाता, विद्यार्थी कार्य मेरे पास छात्रों को एक गोपनीय पत्र के साथ भेजा करते थे और मैं उनको कई अभिनव तरीकों से उनकी गलती महसूस कराने का प्रयास करता था। और भविष्य में अंतरात्मा के खिलाफ कोई अनैतिक कार्य करने से बचें इसके लिए प्रेरित करता था । साईं मेडिकल सेवा में तो वे मेरे साथ होते ही थे । ऐसे छात्र आज भी उच्च पदों पर आसीन होकर भी मुझसे जुड़े हुए हैं।

(3) डॉ धांडे इस बात के लिये अत्याधिक प्रयासरत थे कि छात्रों को संस्थान-स्वास्थ्य-सेवाओं से असंतुष्टि को कैसे कम करें । मेरे और उनके विचार विमर्श से हॉल 10 में एक 'होस्टल मेडिकल डिस्पेंसरी' स्थापित की गई। उसको संचालित करने के लिए मुझे पूर्ण स्वतंत्र अधिकार दिए गए । मैंने दो अत्यंत मृदुभाषी वरिष्ठ-आयु वर्गीय एम बी बी एस चिकित्साधिकारी द्वारा छात्रों के लिए यह सुविधा प्रारम्भ की ताकि वे प्यार से बड़ों की तरह युवा छात्रों की दैनिक बीमारियों के लिए संवाद स्थापित करें ।यह डिस्पेंसरी भी सामान्यतः छात्रों ने खूब पसंद की ।

(4) मेरी एक परिकल्पना, जो उस समय संस्थान प्रशासकों को प्रस्तावित करते ही बहुत पसंद आई थी, मेरे अवकाश ग्रहण करते ही भ्रूण-हत्या जैसी गति को प्राप्त हुई वह थी Students Health Volunteer Scheme (SHVS). यदि यह संस्थान में प्रायोगिक स्तर पर भी शुरू की जाती तो मुझे विश्वास है संस्थान से पास आउट होने वाले अनेक छात्र जीवनपर्यंत एक सोशल Health Volunteer बनने की विल और स्किल बोनस में ले कर जाते ।

अंत मे मैं इतना अवश्य कहूँगा की जिस प्रकार अनेकों संकाय सदस्य अपने उत्कृष्ट कार्यों के लिए समय समय पर पुरस्कृत किये जाते हैं, और इन उपलब्धियों और पुरस्कारों को संस्थान में और मीडिया में प्रचारित किया जाता है, स्टॉफ सदस्यों को भी उनके उत्कृष्ट योगदानों के लिए पुरस्कार दिए जाने की योजना होनी चाहिए। किसी मशीन के चलने लिए सबसे छोटा पुर्जा भी सही लगा हुआ होना जरूरी होता है । इस महान संस्थान का मैं सदैव ऋणी रहूँगा जिसने मुझे और मेरे परिवार को इतना प्यार और सम्मान दिलाया और मेरे व्यक्तिव को सतत आत्मगर्वित किया । •

डॉ ओ पी मिश्रा
पूर्व चिकित्सक

IIT मां है तुम्हारी, तुम्हारी मां के बाद

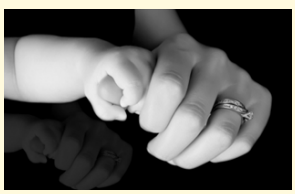

आज हर शख़्स के माथे पे बंधा है सेहरा
आँख से नूर टपकता है, है रोशन चेहरा

लोग तो चेहरा सजातें हैं लगा कर सेहरा
तूने तो यार मेरे कर दिया रोशन सेहरा

फूल-ओ-मोती से पिरोते आये हैं लोग
तूने तो खून-ओ-पसीने से पिरोया सेहरा

IIT मां है तुम्हारी, तुम्हारी मां के बाद
अपने हाथों से तेरी मां ने सजाया सेहरा

विक्रम किनरा, पूर्वछात्र

नवंबर माह भी ख़त्म हो गया और जाते-जाते इस बात का भली भांति एहसास करा गया कि जीवन में एक और साल कम हो चुका है। आई. आई. टी. में अपनी पढ़ाई चालू किये हुए दो साल बीतने को हैं और इस बात से लोगो की ज़ुबान पर हमेशा रहने वाले कुछ शब्द याद आ गए कि "पता ही नहीं चला कि समय कब निकल गया ।" मेरी बढ़ती उम्र को ध्यान में रखते हुए घर वाले शादी करने का दवाब भी बनाने लगें हैं और काम में कोई खास प्रगति न देख कर मेरे गाइड प्रोफेसर मुझ पर काम करने का भी दबाव बनाने लगें हैं। इन दो तरफ से दिए जा रहे दवाब के बीच मेरे बड़े शरीर के अंदर बैठा हुआ एक छोटा बालक खुद में सिमटा और घबराया हुआ है!

पढ़ाई लिखाई के कारण अपने जीवन का लगभग आधा समय अपने घर से दूर ही बिताया हैं। जब पहली बार घर छोड़ कर पढ़ाई के लिए भोपाल जाना था तब अपने घर में अपनी आखिरी रात बिना सोये ही गुजार दी थी। सारी रात भर मैं अपने बगल में सो रही अपनी माँ और बहन को निहार रहा था। बीच रात में बगल वाले कमरे में सो रहे पिताजी को भी कुछ देर के लिए देखने गया था और कुछ समय के लिए घर की दीवारों और सामान को देख रहा था।

आज घर छोड़े हुए लगभग बारह वर्ष बीत चुके है फिर भी उस रात की स्मृति बिलकुल स्पष्ट रूप से मौजूद है। सतही तौर पर सोचें तो यह एक स्मृति ही लगती हैं पर गहराई से सोचने पर ऐसा मालूम होता है कि मेरे मन में उस रात की स्मृति नहीं बल्कि उस रात को जाग कर अपनी माँ, अपनी बहन और अपने पिता को देखने वाला वह छोटा लड़का ही अब तक जीवित है। उसके लिए मानो समय रुक सा गया है और वह अभी भी उस वक़्त में जी रहा है जहाँ माँ की ममता, बहन का प्यार और पिता का संरक्षण ही उसकी दुनिया और उसके लिए सब कुछ हैं।

उम्र के इस पड़ाव में हर वक़्त अपने जीवन में किसी चीज की कमी सी लगती हैं, शायद एक भावनात्मक सहारे की या स्पष्ट शब्दों में कहें तो एक जीवन साथी की। दुनिया-जहाँ के बारें में अपनी बढ़ चुकी समझ के बाद अब किसी पर सहज विश्वास करने में भी एक डर सा रहता हैं और ऐसी परिस्थितियों के फलस्वरूप जीवन जीने की इच्छा या जीवन में रूचि भी कम होती जाती है। परन्तु इन सब के बाद भी जीवन जीने की इच्छा ख़त्म नहीं होती हैं! ऐसा क्यों हैं ?

हम सब की जिंदगी में समस्याएं भरपूर हैं और हो भी क्यों न आखिर भागवत पुराण में इस धरती को "दुःखस्य आलयम" ऐसे ही नहीं कहा गया है। और इन सभी समस्याओं से उपजी प्रतिकूल परिस्थितियों के होने के बाद भी हमारे भीतर जीने की इच्छा बची ही रहती है। कोई इन परेशानियों से लड़ने के लिए और खुद को इनके दुष्प्रभाव से बचाने के लिए पूजा-पाठ करना चालू कर देता है तो कुछ लोग मालाएँ और अंगूठियां पहनने लगते हैं। कुछ लोग तो अपना दुःख सारी दुनिया को बाँट कर खुद को हल्का कर लेते हैं और कुछ दूसरों का दुःख दर्द सुन कर खुश हो जाते है की उनका अभी कम हैं। किन्तु ये सारे प्रयोजन तो बाहरी हैं और सब अपनी-अपनी सुविधा और पसंद के मुताबिक कुछ न कुछ करते हैं। पर इन सब के अलावा भी एक बहुत ही सूक्ष्म चीज है जो हमें निरंतर प्राण ऊर्जा देती रहती हैं,हमें जीने की शक्ति देती रहती है और वह हैं हमारी "स्मृतियाँ "।

हमारी ये स्मृतियाँ हमारे भीतर ही रहती है, कभी एक छोटे बच्चे के रूप में जो कि इस दुनिया के प्रपंच से मुक्त अपने माता-पिता और परिवार के प्यार की छाँव तले जी रहा हैं तो कभी एक बालक के रूप में जो की अपने स्कूल के दोस्तों के साथ इस दुनिया को देख समझ रहा हैं। हमारी ये यादें उस नौजवान के रूप में भी हमारे भीतर जीवित हैं जिसने अपने यौवन के दिनों में किसी की रूह को अपनी रूह से जुड़ा महसूस किया हो और उस नौजवान के रूप में भी जिसने मुसीबत के वक़्त अपनों और परायों को परखा हो और व्यावहारिक जीवन के कुछ कटु सत्यों से परिचित हुआ हो। ऐसे न जाने और कितने ही किरदार हमारे भीतर हमारी स्मृतियों के रूप में रहते हैं!

जीवन की इस भाग दौड़ में जब हम खुद को अकेला और असहाय पाते है और हमारी कमाई हुई दौलत, हमारे बनाये हुए रिश्ते नाते भी हमारे जीवन की शून्यता को ख़त्म नहीं कर पाते और जब अंदर से जीवन जीने की इच्छा ख़त्म होने लगती है तब हमारी स्मृतियों से कोई एक किरदार हमें अपने जीवन की कुछ सुनहरे दौर के सफर में ले जाता है। जहाँ पहुंच कर हम एक बार फिर जी उठते है और हमारी जीवन के दीपक की बुझ रही बाती को कुछ दिनों का तेल मिल जाता हैं। •

संजय चतुर्वेदी,
शोध छात्र विद्युत् अभियांत्रिकी विभाग

बस यूँ हीं न बन जायें

ये सच है कि स्मृतियाँ होती हैं ..... बनती हैं या बनायीं जाती हैं .... लेकिन जब ये लौट कर आती हैं तो वो सब कुछ अपने साथ लेकर आती है .. जिन्होंने मिलकर उन्हें बनाया होता है। अपने मस्तिष्क के द्वार खोल कर कभी कभी हम कुछ कुछ .... या बहुत कुछ या सब कुछ आने देते हैं अपने विचारों में उलझनों को ... और बन जाती है स्मृतियाँ..... लेकिन उन्हें बनाये रखना.. विस्मृत न होने देना और उनके अनुभवों को जीवंत रखना कुछ और ही है.... यह सामान्य नहीं हो सकता....तो .... जो असामान्य है..... क्या वो सामान्यतः सामान्य रहता है... या विशेषता की खोज हमेशा बनी रहती है। यूँ तो स्मृतियाँ जब संग्रहित हो रही होती हैं तो विशेषता का परिमापन नहीं कर पाती परन्तु जब उनके पुनः उदय होने का समय आता है तो विशिष्ट ही होती है.. हाँ ये बात अलग है कि ये विशिष्टता सकारात्मक या नकारात्मक कुछ भी हो सकती है... और ये बहुत कुछ प्रभावशाली बना सकती है... अगर सकारात्मक हो... जैसे भविष्य की नीव या वर्तमान का शिखर ..... विचारों के खँडहर या भावनाओं का किला। ऐसा लगता है कि ये बहुत ही आवश्यक है .... कि हमारी स्मृतियाँ यूँ ही अपना रास्ता न बदल लें... और जा कर किसी और गली में न उतर जाएँ... क्योंकि अगर ऐसा होता है तो उन स्मृतिओं से जुड़ा हर सदस्य उन दूसरी गलियों का प्रतिबिम्ब बन जाता है... और फिर वो स्मृतियाँ अपनी मूर्तता को ढूढ़ नहीं पाती है...।

कभी कभी मानवीय अक्षमताओं के कारण हम कुछ ऐसा करने बैठ जाते हैं जो अंततः रुचिपूर्ण नहीं होता है ...जैसे स्मृतियों को कुरेदना. ... ये उतना ही दर्द वाला होता है जितना कि किसी घाव को कुरेदना. .. मगर अभी तो हम सकारात्मक और नकारात्मक दो पहलुओं की बात कर रहे थे ...तो क्या सकारात्मक स्मृतियों का दर्द भी घाव कुरेदने जैसा होता है? शायद नहीं, मगर क्या सकारात्मक स्मृतियाँ हमारे व्यस्त मस्तिस्क में सामान्यतः जगह बना पाती हैं ? और फिर वही प्रश्न अपने अस्तित्व को ढूँढ़ता हुआ आ पहुँचता है ...कि क्या स्मृतियाँ सामान्य होती हैं या विशेषता की तलाश हमेशा बनी रहती है ? वैसे तो स्मृतियाँ अनायास भी आ जाती हैं और अनायास आने वाले को आ जाने से शायद ही कोई रोक सकता है ... मगर सकारात्मक स्मृतियों को महत्व कौन देता है। सब बस चाहते हैं...ढूँढते हैं... और पाने की कोशिश करते हैं कि जो कुछ भी नकारात्मक था वो क्यों था?

क्या मैं उस पल उसका सही से सामना कर पाया? और सबसे महत्वपूर्ण कि किसने उस पटकथा का सूत्र पिरोया जिसमें मैं घिर गया था ? और जब इन सबके साये हों तो सकारात्मकता तो ओझल ही हो जाती है और शेष रह जाती हैं केवल नकारात्मक स्मृतियाँ .....!! और ये नकारात्मक स्मृतियाँ पलट पलट कर आती रहती हैं और हमारे वर्तमान और कभी कभी तो हमें ही नकारात्मक बना देती हैं॥ तो ये आवश्यक हो जाता है कि कोई तरकीब हो जो इन्हें हमसे दूर रख सके...मगर कैसे? शायद एक ही उपाय है .... कि हम अपनी समस्याओं से ज्यादा समय अपनी सुविधाओं की विवेचना करने में लगाएं....तो ये हो सकता है कि हमारे मानस के खाचें में ज्यादा से ज्यादा घरौदें सकारात्मकता के बनें और भविष्य में जब इन घरौदों के रोशनदानों से स्मृतियों के उजाले निकालें तो ..विशेषतः सकारात्मक ही हों ॥ तो इसलिए ये कहना अनुचित न होगा कि नकारात्मकता से दूर रहें कहीं ये आपकी स्मृतियाँ न बन जाएँ और आपका पूरा जीवन इनके पटाक्षेपों का पुलिंदा बन कर रह जाये ॥

वर्तमान के क्रिया कलापों से सदा सुनहरा पल लाएं।

संभल के चलिए इस पगडण्डी पे, कहीं स्मृतियाँ.....बस यूँ हीं न बन जाएँ ॥ •

संतोष कुमार मिश्र "केशवेन्दु" सहायक प्राध्यापक
जैव विज्ञान एवं जैव अभियांत्रिकी विभाग

मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से सबसे प्रमुख आवश्यकता भोजन है । भोजन को सरल भाषा में परिभाषित किया जाए तो कह सकते हैं "भोजन वह है जिससे शरीर को पोषित किया जाता है और ऊर्जा प्रदान की जाती है और उसी उर्जा से व्यक्ति अपने कार्यों का निष्पादन करता है।" भारतीय संस्कृति का यदि हम अवलोकन करें तो भोजन का महत्व प्राकृतिक चिकित्सा के रूप में विशेष है। भोजन को अनेक गुण व प्रकृति के अनुसार भिन्न-भिन्न भोज समूह में विभक्त किया गया है। आयुर्वेद में भोजन को व्यक्ति के स्वरूप एवं प्रकृति के अनुसार देने की व्यवस्था की गई है। भारतीय आहार मात्र पेट भरने या भूख शांत करने का माध्यम नहीं है। यह मनुष्य को शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से धनी रखने का भी एक माध्यम है।

आज के भारतीय की दशा इसके विपरीत देखी जा सकती है। वैश्वीकरण के चलते भारत की संपूर्ण संस्कृति पर जो विदेशी छाप पड़ी है उसका सीधा संबंध एवं प्रभाव हमारी जीवन शैली पर देखा जा सकता है। निसंदेह हम आर्थिक दृष्टि से अग्रणी हो रहे है। परन्तु हमारी जीवन शैली का भी पाश्चात्य करण हो चुका है। इसका सबसे अधिक प्रभाव हमारे भोजन पर देखने को मिलता है। आज हम पूरी तरह से डिब्बाबंद भोजन पर निर्भर हो चुके हैं जो हमारे पर्यावरण और स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डालता है। कोई 2 मिनट में भोजन बनने वाला पैकेट संपूर्ण स्वास्थ्य नहीं दे सकता। स्वास्थ्य वर्धक भोजन वही है जो धैर्य एवं शांत चित्त से बनाया जाए और रूचि पूर्वक खाया जाए। तभी उसके महत्व को समझा जा सकता है।

आदिकाल में भारतीय मसालों एवं खाद्य पदार्थों की सुगंध संपूर्ण विश्व पर छाई हुई थी। परंतु आज हम भारतीयों का पश्चिमीकरण इस कदर हो चुका है कि हमारा आहार भी विदेशी हो चुका है। इसका दुष्परिणाम हमारे स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव के रूप में देखने को मिल रहा है। मोटापा, डायबिटीज, हृदय संबंधी बीमारियां व अन्य जीवन शैली से संबंधित रोग इसी प्रकार के भोजन की देन हैं।

डिब्बा-बंद भोज्य पदार्थों का आकर्षक प्रचार-प्रसार और आसानी से बन जाने के गुण के कारण आज यह हमारे भोजन का अहम् हिस्सा बन चुके हैं तथा हमें मानसिक और शारीरिक रूप से रोगी बना रहे हैं। जो भी वस्तु स्थानीय मौसम एवं जलवायु के अनुसार पैदा की जाती है, वह वहां के स्थानीय निवासियों के लिए सबसे अधिक

स्वास्थ्यवर्धक होती है, ना कि विदेशी खाद्य सामग्री जो डिब्बे या पैकेट में लाई जाए। उदाहरण के तौर पर यदि आप कहीं बाहर जाते हैं तो वहां का पर्यावरण आपकी कार्यक्षमता को भी प्रभावित करता है तथा आप उतने प्रभावी ढंग से कार्य नहीं कर पाते जितने प्रभावी ढंग से अपने पर्यावरण एवं अपने परिवेश में करते हैं। वहां के पर्यावरण के अनुकूल होने में आपको समय लग जाता है। तो आप कैसे उम्मीद कर सकते हैं कि जो भी बाहर से डिब्बे या प्लास्टिक के पैकेट में बंद होकर खाद्य सामग्री प्रिजर्वेटिव के साथ लाई गई है, आपके लिए लाभप्रद होगी। सिर्फ प्रचार प्रसार व मनभावन ऑफर देकर आपके स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ होता है।

प्रयास कीजिए और उन भोज्य पदार्थों का चयन करें जो ऋतु और मौसम के अनुसार स्थानीय भोजन में शामिल हैं। वह आपके स्वास्थ्य की रक्षा करने में सहायक होगा तथा आर्थिक रूप से भी आप की बचत होगी। अंत में सबसे बड़ी बात! इससे पर्यावरण की भी रक्षा होगी जो आज के समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। •

निशी शर्मा, w/o
डॉ. अंकुश शर्मा,
विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

आई आई टी कानपुर से मेरी पहली मुलाकात को कोई अठाइस साल से ऊपर समय बीत गया। जब पढाई के सिलसिले में मैं पहली बार यहाँ आई थी, कुछ शोध कार्य हेतु, तब कहाँ पता था कि करीब दो साल के अंदर ही मैं यहाँ आकर स्थाई रूप से बस जाउंगी। बहरहाल, वो तो बाद की बात है। पहली मुलाकात का अनुभव बड़ा ही आनंददायक था।

दिसंबर की एक सुबह जब कानपुर सेंट्रल पर रेलगाड़ी रुकी तो अटेची संभाले, बहार निकलकर, बस स्टॉप पर खड़ी आई आई टी की बस पर जा बैठी। रुकते चलते सवारी उठाते बस आई आई टी में दाखिल हुई और वी एच के मोड़ पर उतार दिया। वहां से चलकर वी एच तक आना, फिर नाश्ते के बाद डिपार्टमेंट होते हुए लाइब्रेरी जाकर अपना कार्य प्रारम्भ करना तो आम बात थी। अद्भुत रोमांचक बात तो तब हुई जब शाम को कमरे में लौटकर बरामदे में आते ही मोर के दर्शन हुए और वो मोर जिज्ञासु नेत्रों से मेरी ओर देखता रहा जब तक मैंने उसे बैग में रखे बिस्किट का नाश्ता न कराया।

उन दिनों किसी शहर से आकर पहली बार कैंपस जीवन प्रत्यक्ष रूप से देखना सुखद था। चारों तरफ हरियाली और चौड़ी साफ़ सड़कें जिन पर कम से कम वाहनों का होना, एक अलग दुनिया लगी थी। शांत वातावरण में मोर तथा अन्य पक्षियों की मधुर तानें मुग्ध कर गई थी।

1982 में, विवाहोपरांत, जब मैं यहाँ आई तो पिताजी भी साथ आये थे और उन्होंने यहाँ टाइप 5 के मकान में रह रहे प्रोफेसर सिन्हा से मिलवाया जो उनके मित्र के दामाद थे। मज़े की बात यह है कि आज वर्षों पश्चात् हम उसी मकान में रह रहे है। दोबारा आई आई टी आकर भी हमें उसी वी एच में रहने का अवसर मिला जहाँ दो साल पहले आकर हमनें तीन दिन बिताये थे।

पिछली सहस्राब्दी के अंतिम दशक में आई आई टी कानपुर में मेरी यात्रा मनोहर रही। गेस्ट हॉउस से टाइप-2 के दूसरी तथा पहली मंज़िल में हमनें छत और बगीचे का आनंद लेते हुए कई साल काटे। उन दिनों बच्चों के लिए कई सुविधाएँ व सीखने के मौके उपलब्ध थे, जैसे - प्ले स्कूल तथा संगीत, नृत्य, चित्रकला व खेल कूद की कक्षाएं। बड़ों के लिए भी संगीत सीखने की सुविधाएँ थी। सुविधाएँ आज भी हैं कहीं और अधिक।

कानपुर आई आई टी में रहते हुए मेरी नौकरी तथा गैर-तनख्वा कार्यों का सिलसिला कुछ छोटे-छोटे विविध टुकड़ों का बुना रहा। सर्वप्रथम इंफोसेल में एक माह कार्यरत रहे फिर भारतीय आहार स्कूल में स्वेच्छासेवक के रूप में पढ़ाया।

पारिवारिक ज़िम्मेदारियों के कारण समय आभाव से पीछे हटना पड़ा। तत्पश्चात परिसर से बहार एक विद्यालय में एक वर्ष तक शिक्षण कार्य में जुटे रहे। पुनः कैंपस स्थित केंद्रीय विद्यालय में पांच महीने तक अवकाश रिक्ति (leave vacancy) के कारण उत्पन्न पद पर कार्यरत रही। उसके बाद कानपुर विश्वविद्यालय में भी कुछ समय तक पढ़ाया।

1993 में आई आई टी के EPP के अंतर्गत एक वर्ष के लिए मेरी नियुक्ति परियोजना वैज्ञानिक के पद पर हुई। इसी दौरान मेरे परिसर जीवन को एक अलग दिशा मिली। कार्यकाल में कई प्रतिस्पर्धाओं में भाग लिया और कई लोगों से मिली। राजभाषा पखवाड़े में भाग लेते हुए राजभाषा प्रकोष्ठ के अधिकारियों से मिलना व उनसे मिले उत्साह से मेरे लेखन शौक का जन्म होना बड़ा ही संतोषजनक रहा। 2016 में एक बार 'स्नेहन' में ग्रीष्म शिविर आयोजित करने का भी अवसर मिला। 2017 में विमेंस एसोसिएशन के तत्वावधान में बच्चों के लिए पुस्तकालय CBC (चिल्ड्रेन्स बुक क्लब) खोला गया, जिसके साथ, अन्य कई स्वयंसेवकों के संग, मैं सहर्ष जुडी हूँ।

इस परिसर ने मुझे बहुत कुछ दिया, मैंने बहुत कुछ सीखा। वैसे तो जीवन में सुख-दुःख दोनों ही मिलते हैं, उतार-चढ़ाव आते रहते हैं परन्तु मैं अपने आई आई टी जीवन के मात्र सुखद अनुभवों को याद रखना चाहूंगी। •

डॉ अंजना पोद्दार

विविध या एक

था जीवन का वह शौर्य गीत
उस गीत की वह एक करुणा थी।
वह अस्त व्यस्त सा पड़ा हुआ,
वो उसकी सुन्दर सी रचना थी।
वह आता जाता एक सा था
वो सब भावों की उपमा थी।
वह पराधीन से सिंह सा था,
वह कल-कल बहती सरिता थी।
वह पथ के उस राही जैसा जो बस चलता ही जाता है,
वह उस पथ पर उस राही जैसा जिसको अनुभव सिखलाता है।
वह पतछड़ से बूढ़ा यौवन
वह कुसुमकली सी खिली हुई
वह मादकता में वह पदार्थ जिसको ले जीव भटकता है
वह उस मद में भी कनक सी थी, जो शिवलिंगों पर चढ़ता है
वह रिक्त परन्तु विमुक्त नहीं , स्वप्नों को ही ले पलता है।
वह तरु की उस डाली जैसी, जो फहराने पर झुकती है
वह क्षत्रिय के शूरत्व समान
वह करती ब्राहमण की शीलता बखान।
वह विजयघोष का हाहाकार
वह पराजय में भी है लिए सीख का सार
वह आशुतोष त्रिनेत्र समान
वह उसी रुद्र की गंगा धार
वह रात्रि काल का सन्नाटा
वह मधुर शांति है ऊषा की
वह युद्ध महाभारत समान
वह उसी युद्ध में गीतसार।

रवि शुक्ला, छात्र
यांत्रिक अभियांत्रिकी

गुरुवे नमः

जिंदगी के स्रोत में बहता मैं गया,
किनारों से होके बस गुजरता ही गया।
उन्हीं किनारों से किसी ने आवाज़ जो लगाया
ठहर कर देखा तो गुरु आप ही को पाया।
मुझ से नादान को आपने प्यार भरपूर दिलाया
एक भ्रमित पथगामी था जिसको दिशा है दिखाया
मुश्किलों में डटे रहने का आत्मविश्वास भी बढ़ाया।
डाँटा पर सही, गलत की पहचान भी कराया।
फिर मुस्कुरा कर न जाने कितना पढ़ाया और समझाया।
जब आप पास थे तब समझ नहीं पाया
जब समझा तब मिलने का मौका छिन गया।
शिक्षा-संस्कार का संतुलन आप ही ने सिखाया,
कठिनाइयों में मदद आपका हमेशा है पाया।
दिल की बाग में यादें आपकी हमेशा खिली रहेगीं
आपसे प्राप्त ज्ञान की रौशनी पूरे समाज में फैलेगी
इसी गर्व से सीस आपका हमेशा ऊँचा रहेगा
सम्मान में आपके, सीस हमारा सदैव झुका रहेगा।

साईं सुमन्त बेहरा, छात्र

हीरक वर्ष पर आयोजित विभिन्न कार्यक्रम

फैशन-शो

उस्ताद सुजात खान

ओ पी शर्मा का जादू कार्यक्रम

रवीन्द्र संगीत कार्यक्रम

पदमश्री भजन सोपोरी

लोकनृत्य कार्यक्रम

हरिवंशराय बच्चन का जन्म 27 नवम्बर 1907 को इलाहाबाद में एक कायस्थ परिवार मे हुआ था। इनके पिता का नाम प्रताप नारायण श्रीवास्तव तथा माता का नाम सरस्वती देवी था। इनको बाल्यकाल में 'बच्चन' कहा जाता था जिसका शाब्दिक अर्थ 'बच्चा' या 'संतान' होता है। बाद में ये इसी नाम से मशहूर हुए। इन्होंने कायस्थ पाठशाला में पहले उर्दू और फिर हिंदी की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम ए और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य के विख्यात कवि डबलू बी यीट्स की कविताओं पर शोध कर पीएच डी पूरी की थी । उनका विवाह श्यामा बच्चन से हुआ जो उस समय 14 वर्ष की थीं। लेकिन 1936 में श्यामा की टीबी के कारण मृत्यु हो गई। पाँच साल बाद 1941 में बच्चन ने तेजी सूरी से विवाह किया जो रंगमंच तथा गायन से जुड़ी हुई थीं। इसी समय उन्होंने 'नीड़ का निर्माण फिर' जैसे कविताओं की रचना की।

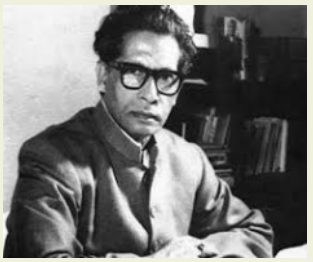

साथी, नया वर्ष आया है

साथी, नया वर्ष आया है

वर्ष पुराना, ले, अब जाता,

कुछ प्रसन्न-सा, कुछ पछताता,

दे जी भर आशीष, बहुत ही इससे तूने दुख पाया है

साथी, नया वर्ष आया है।

उठ इसका स्वागत करने का

स्नेह-बाहुओं में भरने को,

नये साल के लिए, देख, यह नई वेदनाएँ लाया है।

साथी, नया वर्ष आया है।

उठ ओ पीड़ा के मतवाले।

ले ये तीक्ष्ण-तिक्त-कटु प्याले,

ऐसे ही प्यालों का गुण तो तूने जीवन भर गाया है।

साथी, नया वर्ष आया है।

साभार
'निशानिमंत्राण'
हरिवंशराय बच्चन

हिन्दुस्तान एवं उसके नागरिक अपने दैनिक कार्यों को निष्पादित करने के लिए डिजिटल प्रणाली को अपनाने की ओर तेजी से अग्रसर हैं। अस्पताल, जन्म/मृत्यु पंजीकरण, आइडेन्टिटी रजिस्ट्रेशन के लिए जमीन की रजिस्ट्री, वोटिंग एवं बैंकिंग के अतिरिक्त विभिन्न कार्यों के लिए सरकार के साथ विचार-विमर्श के रुप में इनके अनेक उदाहरण हमें देखने को मिल जाएंगे। देश के अधिकांश नागरिक डिजिटल लेन-देन की ओर बढ़ रहे हैं। भारत में फिलहाल स्मार्टफोन की संख्या 373 मिलियन तक पहुंच गई है जिसके वर्ष 2022 तक लगभग 442 मिलियन तक पहुंचने की उम्मीद है। भले ही कुछ व्यक्ति एक से अधिक स्मार्टफोन रखते हो फिर भी यह माना जा सकता है कि कम से कम 200 मिलियन व्यक्ति स्मार्टफोन का प्रयोग कर रहे हैं। स्मार्ट फोन का प्रयोग करने वाले व्यक्ति डिजिटल रूप में भुगतान का लेन-देन करने, वेरिफिकेशन की पहचान करने, मुख्य दस्तावेजों की प्रतिलिपि रखने तथा उनका पत्र-व्यवहार के रूप में प्रयोग करने जैसे कार्यों को आज आसानी से सम्पन्न कर रहे हैं। बिजली व्यवस्था जिसमें, थर्मल, न्यूक्लियर और सोलर बिजली उत्पादन स्टेशन शामिल हैं, उन सबका प्रेषण और वितरण कम्प्यूटर आधारित सेंसर्स, कंट्रोलर्स एवं ऐक्ट्यूऐटर्स से संचालित होता है। उल्लेखनीय है कि ये सभी डिजिटल उपकरण हैं तथा कंट्रोल सेंटर सॉफ्टवेयर पर आधारित हैं। बैंकिंग सिस्टम पूरी तरह से सॉफ्टवेयर आधारित है जिनका गोपनीय डेटा इनके डेटा सेंटर में रखा जाता है जिसमें यदि सेंध लग जाए तो पूरा का पूरा बैंकिंग सिस्टम ध्वस्त हो सकता है जिसके फलस्वरूप निश्चित रूप से व्यक्ति विशेष की जमा पूंजी भी पूरी तरह से बर्बाद हो सकती है। रेलवे की सिग्नल प्रणाली, एयर ट्रैफिक कंट्रोल और एयरपोर्ट पर विमानों की समय-सारणी जैसा आज का परिवहन सिस्टम पूरी तरह से सॉफ्टवेयर पर आधारित है।

आज कल बैंकों की धोखाधड़ी से संबंधित कुछ मामलों/घटनाओं ने लोगों को जागरूक एवं सतर्क बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बड़े ही शातिर ढंग से साइबर अपराधी उन आम लोगों को बेवकूफ बनाते हैं जो इन खतरों के बारे में बहुत अधिक जागरूक नहीं होते। उल्लेखनीय है कि तथाकथित रूप से अपराधियों का यह तरीका 'सोशल इंजीनियरिंग' कहलाता है। लोगों से फोन पर बात की जाती है, वाट्सऐप अथवा एसएमएस मैसेज या फिर मेल भेजे जाते हैं, उन्हें लुभावने ऑफर दिये जाते हैं जिनके झांसे में आकर व्यक्ति बैंक से संबंधित अपनी सूचनाएं सांझा कर देता है। ऐसा करते समय अपराधी तथाकथित रूप से बैंक का कर्मचारी होने का दिखावा करता है जबकि वह बैंक का कर्मचारी नहीं बल्कि एक साइबर अपराधी होता है जो अपने फोन पर वन टाइम पासवर्ड (ओ टी पी) भेजने के लिए कहता है। यदि अनभिज्ञ व्यक्ति अपना ओ टी पी सांझा कर देता है तो साइबर अपराधी आपके बैंक खाते पर अपना पूर्णतया नियंत्रण कर लेता है तथा आपके खाते से पूरी रकम उड़ा देता है। आमतौर पर बैंक की ओर से इस समस्या का कोई समाधान उपलब्ध नहीं है क्योंकि अपराधी ने आपकी खुद की साख (क्रेडेंशियल) का प्रयोग किया है अथवा लेन-देन के लिए आपकी साख (क्रेडेंशियल) का प्रयोग करके आपको चालाकी पूर्वक अपने जाल में फंसाया है परन्तु अधिक शातिर अपराधी आपको वाट्सऐप अथवा फेसबुक मैसेंजर पर ई-मेल या एसएमएस अथवा मैसेज भेजकर अधिक शातिर तरीके से अपना शिकार बनाता है जैसे ही आप दिये गये लिंक पर क्लिक करते हैं अथवा इमेज को डाउनलोड़ करते हैं तो आपके फोन पर मैलवेयर (वायरस) डाउनलोड़ हो जाता है। यदि आपके फोन में सॉफ्टवेयर अपडेट करने का नवीनतम वर्जन नहीं है (कंपनी द्वारा आपको अक्सर सूचित किया जाता है कि सिस्टम अपडेट उपलब्ध है परन्तु सुस्ती अथवा इन अपडेट को डाउनलोड करने की लागत के कारण व्यक्ति इनकी अनदेखी कर देता है) तो मैलवेयर (वायरस) आपके सिस्टम की सुरक्षा को आसानी से भेद देता है तथा उस पर अपना नियंत्रण कर लेता है। इसके पश्चात यदि आप अपने फोन पर किसी भी प्रकार का लेन-देन अथवा किसी भी प्रकार की बैंकिंग या फिर किसी भी प्रकार की बातचीत करते हैं तो वह सब साइबर अपराधी को दिखाई पड़ेगीं जिसके परिणामस्वरूप यदि आप अपने फोन पर कोई ओ टी पी प्राप्त करते हैं अथवा फोन के बैंकिंग ऐप पर कोई पिन टाइप करते हैं तो यह सब अपराधी के पास उपलब्ध रहेगी जिसके कारण अपराधी आपके खाते को खाली कर सकता है, परेशान करने के लिए आपके मैसेज का दुरूपयोग कर सकता है अथवा फोन पर आपके गोपनीय दस्तावेजों को उजागर करके आपकी निज़ता का उल्लंघन भी कर सकता है।

यह बात सत्य है कि अधिकतर भारतीय सस्ते चाइनीज़ स्मार्टफोन का इस्तेमाल करते हैं। अन्य कई देशों में इंटेलीजेंस अधिकारियों द्वारा चेतावनी दी गई है कि उक्त फोन आमतौर पर मैलवेयर (वायरस) संस्थापित फोन होते हैं इसलिए संबंधित कंपनी दूसरे देशों के

नागरिकों की सभी सूचनाएं संग्रहित/हासिल कर सकती है। उक्त सूचनाएं इन कंपनियों के लिए क्यों महत्वपूर्ण हैं? जानना आपके लिए महत्वपूर्ण है। कंपनियों के लिए आंकड़े नवीनतम ईंधन के रूप में सामने आये हैं। लाखों-करोड़ों लोगों की आदतें, उनकी खरीददारी का शौक, उनकी आय, लोकेशन तथा यात्रा के स्वरूप से संबंधित आंकड़े कंपनियों के लिए अत्यन्त लाभकारी साबित हो रहे हैं। इसके पश्चात उक्त कंपनियां आपकी जरूरत एवं शौक के मुताबिक विज्ञापन देकर आपको टारगेट करती हैं। उल्लेखनीय है कि यह स्थिति तब और भी बदतर हो जाती है जब कोई विदेशी सरकार अथवा आपकी अपनी सरकार आपकी निजी जानकारियों/आकड़ों पर अपना आधिपत्य जमा लेती है। कंपनियां आम धारणा बनाने के लिए झूठी जानकारियों/आंकड़ों के साथ आपको टारगेट करती है। कंपनियां किसी पार्टी विशेष अथवा अल्पसंख्यक समुदाय के खिलाफ आपके मन में जहर घोलने के लिए भी आपकी निजी जानकारियों/आंकड़ों का दुरुपयोग करती हैं। सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक जिसका आज हम सभी सामना कर रहे हैं वह है, सूचना (इन्फॉर्मेशन) युद्ध। आज के डिजिटल युग से पूर्व भी सूचना युद्ध हुआ करता था परन्तु उस समय यह कम प्रभावी हुआ करता था । आज के समय में हम इसका प्रभाव अमेरिका, इंग्लैंड सहित भारत में भी देख सकते हैं।

इसलिए एक नागरिक के रूप में हम हमेशा साइबर अपराध के निशाने पर रहते हैं। हालांकि यह इस बात पर निर्भर करता है कि अपराधी कौन है, अपराध का स्वरूप एवं उद्देश्य कैसा है? अपराधी व्यक्ति विशेष अथवा समूह में हो सकते हैं जो आपके धन पर नज़र जमाए रखते हैं। तत्पश्चात अपराधी तथाकथित 'सोशल इंजीनियरिंग' का प्रयोग करते हैं, आपके फोन अथवा लैपटॉप को हैक करना उनके लिए सबसे आसान कार्य होता है। यदि यह कार्य सरकार के स्तर पर होता है तो यह सब डेटा संग्रह अथवा विभिन्न छिद्रों के माध्यम से किया जाता है जिसे वे आपके फोन अथवा कम्प्यूटर में आसानी से बना सकते हैं या फिर बैंकिंग डेटा एवं कंपनी के असुरक्षित आई टी सिस्टम द्वारा संग्रहित किये गये कर्मचारियों के आधार से जुड़े आंकड़ों के रूप में भी किया जा सकता है।

एक भिन्न प्रकार का हमला जो आज-कल देखने में आ रहा है वह भविष्य में देशों के मध्य आपस में होने वाले साइबर युद्ध की प्रबल आशंका के रूप में विद्यमान है। वर्ष 2016 एवं 2017 में रुस के हैकर्स ने दो बार यूक्रेन के पॉवर ग्रिड पर हमला किया जो शीतकाल के मध्य में लगभग 2.5 लाख लोगों के घरों की विद्युत आपूर्ति को बाधित करने में सफल रहे। हमने अमेरिका की पॉवर कंपनियों में भी मैलवेयर (वायरस) द्वारा हमले होते हुए देखे हैं। हमने इंग्लैंड के हेल्थ केयर सिस्टम पर रैनसमवेयर के हमले होते हुए भी देखे हैं जिसके फलस्वरूप कई घंटों तक उपचार एवं सर्जरी जैसे विशिष्ट कार्यों में घंटों का विलंब देखने को मिला था। हमने तुर्की के बैंकिंग नेटवर्क पर हमला होते हुए भी देखा है जिसके कारण दो दिनों के लिए बैंकों से संबंधित सेवाएं ठप हो गई थीं। हमने अमेरिका की चुनाव प्रणाली पर भी हमला होते हुए देखा है । हमने डैम, न्यूक्लियर प्लांट्स एवं कई अन्य महत्वपूर्ण आधारभूत सुविधाओं की नियंत्रण प्रणालियों को भी हैक होते हुए देखा है। अभी हाल ही में देखा गया है कि भारत में न्यूक्लियर पॉवर प्लांट की सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली (आई टी सिस्टम) को दक्षिण कोरिया मूल के DTrack मैलवेयर ने खतरे में डाल दिया था। उल्लेखनीय है कि यह सभी कार्य देश की अर्थव्यवस्था एवं सुरक्षा को कमजोर करने के लिए किये जाते हैं। यदि आपको 2012 में उत्तर भारत में हुए ब्लैक आउट के बारे में मालूम है जिसके कारण दो दिनों तक लगभग 600 मिलियन लोगों के घरों में अंधेरा छा गया था तो ध्यान रहे साइबर हमले द्वारा पुनः उसी प्रकार की ब्लैक आउट घटना को अंजाम दिया जा सकता है।

ऊपर कुछ ऐसे क्षेत्रों/खतरों का उल्लेख किया गया है जिनके बारे में सरकार, पॉवर कंपनियों, बैंकों, पॉवर सिस्टम, स्टॉक मार्किट एवं नगर निगमों के नियंत्रकों के साथ-साथ नागरिक सरकारों को तब और अधिक चिंतित होने की आवश्यकता है जब यह खतरा नागरिकों, स्थानीय अर्थव्यवस्था तथा राष्ट्र की सुरक्षा एवं संरक्षा से जुड़ा हुआ हो। हमें अपने व्यक्तिगत आंकड़ों, ऑनलाइन बैंकिंग एवं अन्य परिसंपत्तियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्कूल स्तर से ही साइबर सुरक्षा के बारे में सीखना चाहिए। साइबर सुरक्षा को लेकर 'क्या करें और क्या न करें' प्रत्येक व्यक्ति के सामान्य ज्ञान का हिस्सा होना चाहिए फिर यह चाहे तो स्कूली शिक्षा के माध्यम से हो या फिर प्रशिक्षण अथवा जागरूकता अभियान के माध्यम से हो। उदाहरण के तौर पर जब आपके स्मार्ट फोन में सिस्टम अपडेट करने से संबंधित संदेश प्राप्त होता है तो आपको अपने सिस्टम को तत्काल अपेडट

करना चाहिए। आपका स्मार्टफोन कुछ क्षणों के लिए भी अनजान व्यक्ति के हाथों में नहीं पड़ना चाहिए क्योंकि अनजान व्यक्ति आकस्मिक कॉल करने के लिए आपके फोन का इस्तेमाल कर सकता है, तीस सेकेन्ड के अन्दर मैलवेयर (वायरस) डाउनलोड कर सकता है जिसके पश्चात वह आपके स्मार्टफोन पर अपना पूर्ण नियंत्रण कर सकता है। आपको स्मार्ट फोन का इस्तेमाल केवल अपने अति विश्वसनीय परिचित को ही करने देने की अनुमति देनी चाहिए, भले ही आपका यह व्यवहार किसी को खराब ही क्यों न लगे। यदि आपके स्मार्टफोन, टेबलेट कम्प्यूटर अथवा लेपटॉप/डेस्कटॉप की गति या इसके व्यवहार में किसी भी प्रकार का परिवर्तन देखने को मिलता है तो आपको सतर्क हो जाना चाहिए। आपको सही ढंग से इसकी जांच करानी चाहिए। आपको अपनी डिवाइस पर विश्वसनीय एन्टी वायरस/एन्टी मैलवेयर डाउनलोड करना चाहिए ताकि आपको अचूक सुरक्षा व्यवस्था हासिल हो सके। कुछ ऐसे भी मैलवेयर हैं जिनको आधुनिक एन्टी-वायरस/एन्टी मैलवेयर भी नहीं रोक सकते लेकिन फिर भी आपके सिस्टम में न्यूनतम सुरक्षा कवच तो होना ही चाहिए। हालांकि इस संक्षिप्त लेख के माध्यम से साइबर सुरक्षा जैसे विषय के बारे में विस्तृत तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराना अत्यन्त कठिन कार्य है इसलिए आपको अपने व्यक्तिगत आंकड़ों एवं खातों, समग्र साइबर सुरक्षा, चुनौतियों तथा साइबर सुरक्षा की दृष्टि से जागरूक नागरिक बनने से संबंधित विस्तृत जानकारी के लिए उपलब्ध ऑनलाइन लेख का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। •

प्रोफेसर संदीप शुक्ला
संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी

हे गण

हे गण, प्रतिक्षण
कर संघर्ष सतत

मत कर नत, अपना मस्तक
गरज तू मेघ सा, आगाज कर,

सम्मान मे ज्योत्सना सी रख चमक,
हे वीर प्राचीर रक्षक,

भुजबल पर विश्वास रख
रिपु पसीजा है कहीं??

कर गांडीव सा प्रत्यंच कम्पन,
अर्जुन सा उन्माद कर

हे भूमि पति कृषक,
आग उर में तू जला,

इतिहास भी भुला देगी तेरा क्रंदन,
धूमिल ना हो एक बूंद सा,

रख सिंधु सा हिल्लोल कम्पन,
हे जन गण मन,

इतिहास की सुध भी रख,
अमर ज्योति सी कुर्बानी को याद भी रख,

व्रंत सा गणतंत्र को,
शाश्वत मृदुल कलियों सा रख

रोहित गुप्ता

मर्यादा का सम्मान

वो राम कहाँ से लाऊ अब
जो रावण का संघार करें।
सीता को हरने से पहले
रावण भी अपने मन में,
सौ सौ बार विचार करें।
उस को था पता कि
राम जरूर आयेंगे और
सीता को बचा ले जायेंगे।
करना नही था उसे
सीता को कलंकित
इसलिए कभी वदन
छुआ नही।
देवी की तरह रही पवित्र सीता
रावण के आँगन में भी,
कभी ना कोई जोर
अबला पर किया।
आज भूल गए है
कि मर्यादा का
रावण ने भी सम्मान किया।
कभी विषम परिस्थितियों में
भी उस ने अपनी
सीमा को नहीं पार किया।
कलयुग के जो दानव हैं
रावण कहलाने योग्य नहीं ।
रावण ने कभी पलट सीता
पर ना कोई प्रहार किया।।

संध्या चतुर्वेदी

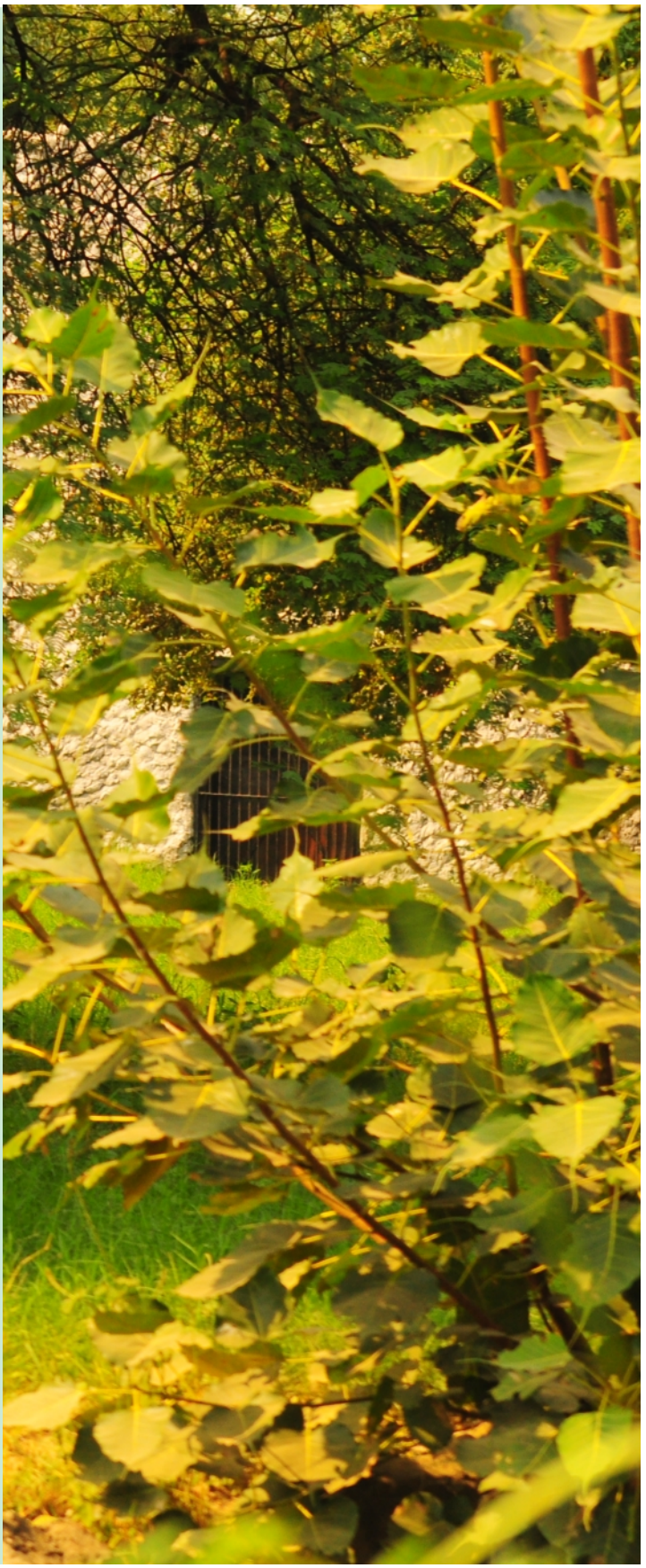

छत्रपति शिवाजी महाराज टर्मिनल, मुंबई के निकट बोरा मार्केट स्ट्रीट में दो चक्कर लगा लेने के बाद भी वो निर्णय नहीं कर पा रहा था कि आज रात वो क्या खाएगा। कहानी का लेखक कई घंटों की मशक्कत करने के बाद भी कहानी के पात्र का नाम नहीं तय कर पा रहा था। कहानी के पात्र असली भी हो तो क्या? नाम तो काल्पनिक ही होना चाहिए। नाम भी ऐसा हो कि किसी फालतू चर्चे का शिकार ना हो जाये। लेखक फैसला करता है कि कहानी को फर्स्ट पर्सन में ही लिखा जाए।

फैसले को टालने के लिए दूसरी बार मैं बोरा मार्केट स्ट्रीट से निकल कर द्वारका दास लेन में मुड़ गया। मोड़ के कोने में जमीन पर बैठा फलवाला बड़ी सावधानी से हलके हरे रंग के ताज़े फिंगर ग्रेप्स के गुच्छे से एक अंगूर तोड़ कर रिदा पहने एक महिला को चखने के लिए दे रहा था। प्लास्टिक के बॉक्स में रखा अँगूर का गुच्छा बेहद ही खूबसूरत लग रहा था। एक पल लालची नज़रों से देखा। जेब में हाथ डाला तो केवल 13 रुपए थे। इतने में कहाँ पेट भरेगा। मैं आगे बढ़ने लगा। पीछे मुड़-मुड कर वापस उस अँगूर के गुच्छे को देख रहा था। रिदा पहने हुए महिला ने अँगूर मुँह में ड़ाला, दुकानवाला उम्मीद से देख रहा था महिला को। मेरे मुँह में अंगूर का बेहद मीठा स्वाद आ गया। मुँह मोड़ कर आगे बढ़ने लगा। शायद मैं किसी गलत गली में आ गया था। एक बेहद भूखे और गरीब इंसान के लिए इससे गलत क्या हो सकता है कि वो तरह-तरह के व्यंजनों से घिर जाये। चारों तरफ समोसे, वडा पाव और केक की खुश्बू। एक ब्लैक फारेस्ट की पेस्ट्री 37 रुपये की। एक वड़ा पाव भी 12 रुपए का था और एक समोसा 10 रुपए का। जल्दी-जल्दी, लगभग भागने जैसा चलकर आगे बढ़ने लगा पेरिन नरीमन स्ट्रीट की तरफ। अभी भी पेरिन नरीमन स्ट्रीट लोगों से भरा था। पेरिन नरीमन स्ट्रीट को लाँघकर द्वारका दास लेन में ही आगे बढ़ने लगा। जहाँ द्वारका दास लेन मोदी स्ट्रीट में मिल रहा था वही ठीक सामने एक मंदिर दिखा जिसके दरवाज़े पर नीले रंग के बड़े -बड़े हाथी बने थे। अचानक नाथद्वारा मंदिर के द्वार पर बने ठीक वैसे ही हाथी याद आए। अँधेरा था। मोदी स्ट्रीट थोड़ा संकरा है। दरवाजा बंद था। दायी तरफ एक छोटा किवाड़ खुला था। किवाड़ के ठीक आगे एक बड़ा सा पोस्टर टंगा था जिसपर लिखा था "छप्पन भोग।" और भी कुछ लिखा था मगर पता नहीं अँधेरे की वजह से नहीं दिखा या भोजन की तीव्र उम्मीद ने अँधा बना दिया था।

किवाड़ से अंदर घुसते ही गोबर की बास आई। रौशनी कम थी मगर भित्ति चित्रों से सजी छत और दीवारें बेहद खूबसूरत लग रही थीं। आँखे अब तक अँधेरे से अभ्यस्त हो चुकी थीं। छत और दीवारों पर कृष्ण और गोपियों की मनोहारी सजावट थी। गोल-गोल लकड़ी के खम्भे और लकड़ी की सीढ़ी मकान की उम्र बयां कर रहे थे।

"ये गोवर्धन दास की हवेली है," एक व्यक्ति ने कहा। मैं ड्योढ़ी पर जड़ित हीरा वाली श्याम रंग के कृष्ण की जानी पहचानी बड़ी से तस्वीर को गौर से देख रहा था।

"ये श्रीनाथ जी हैं। ये पुष्टि समाज का मंदिर है लगभग 150 साल पुरना। वल्लभाचार्या ने 15 वी शताब्दी में पुष्टि समाज की स्थापना की थी। हम कृष्णजी के भक्त हैं खासकर उनके सात साल के रूप श्रीनाथजी के। ये तस्वीर श्रीनाथजी की है। नाथद्वाराजी में श्रीनाथजी की हवेली है। हमारे पंथ में श्रीनाथजी के मंदिर को हवेली कहते हैं। हमारा 142 बैठक है। बैठक उस जगह को बोलते हैं जहाँ वल्लभाचार्यजी खुद उस जगह गए थे या उनके लड़के या सात पोते गए थे। बैठक में वल्लभाचार्यजी का कोई ना कोई सामान होता है। हमारे लिए बैठक में जाना तीर्थ जैसा होता है। वल्लभाचार्यजी के 73 बैठक हैं। ये हवेली है। भाटिया लोगों ने बनवायी है। हम दिन में 7 बार अलग अलग टाइम में श्रीनाथजी का दर्शन करते हैं। अभी शयन, श्रीनाथजी का दिन का आखिरी दर्शन हो गया है और हवेली बंद होने वाला है," वो आदमी और कुछ समझानेवाला था मगर मैंने उसे बीच में ही रोका।

"बाहर छप्पन भोग का पोस्टर लगा था," मैंने कुछ संकोच और कुछ उम्मीद से कहा।

वो आदमी मुझे सीढ़ी के बगल की दीवार के पास ले गया। दीवार पर दो तस्वीरे टंगी थी। उनमें ढ़ेर सारे व्यंजन थे। एक तरफ बड़े-बड़े मगज के लड्डू,जलेबी, हलवा और भी ढ़ेर सारी मिठाइयाँ। ठीक वैसा ही जैसा मैंने नाथद्वारा में देखा था। दीवार पे टंगी दो तस्वीरों में से पहले के तरफ अँगुली दिखाकर कहने लगा ," 2008 की ये तस्वीर है। पूरा ये बरामदा भर गया था व्यंजनों से। यहाँ से वहाँ तक व्यंजन ही व्यंजन। राजस्थान से हलवाई आए थे। छप्पन भोग हमारा त्यौहार होता है। बहुत खर्च होता है। पाँच-पाँच लाख रुपया लगता है। बाहर वाला पोस्टर वासी के हवेली का है। परसों यानि 10 तारीख को वहाँ

छप्पन भोग का त्यौहार है। तुम भी आना।"

मेरी अब कोई दिलचस्पी नहीं रही। मैं हल्का सा प्रणाम कहकर हवेली से निकल गया और वापस बोरा मार्केट स्ट्रीट गया और छत्रपति टर्मिनल की उल्टी दिशा में चलने लगा। बायीं तरफ एक सब्जीवाला जमीन पर दुकान लगाकर बैठा था।

"गाजर कैसे है ? मैंने पूछा।

"देसी लाल गाजर 10 रूपया पाव और नारंगी रंग का बिलायती गाजर 15 रुपया का ढ़ाई सौ ग्राम," दुकान वाले ने कहा।

मेरे जेब में केवल 13 रुपया था। देसी लाल गाजर कम मीठा होगा और बीच में ठूठ जैसा भी होगा जिसे खाने में दिक्कत होगी। "बिलायती गाजर का भाव जरा कम लगा लो ," मैंने धीरे से कहा।

"नहीं , एक दाम है। देसीवाला ले लो।"

मैं आगे बढ़ गया। हाँ , एक दो बार पीछे मुड़कर नारंगी रंग के गाजरों को बस देखभर लिया। कुछ दूर पर एक जवान लड़का फुलाए हुए और अँकुरित मूँग और चना जमीन पर एक बेंच लगाकर बेंच रहा था।

"कैसे है ?"

उसने कुछ नहीं कहा। शायद गूँगा था। इशारे से बताया "25 रुपये का ढ़ाई सौ ग्राम। "

"10 रुपया का मिलेगा," मैंने भी इशारा किया।

"हाँ , क्या लेना है ?" ऐसा उसने इशारा किया।

मैंने मूँग की तरफ इशारा किया।

एक मुट्ठी मूँग उस लड़के ने तराजू में रखा और फिर निकालने लगा। पता नहीं क्यूँ मुझे लगा कि तौल कम है। मैं आगे बढ़ गया। कुछ दूर पर बायें अगियारी लेन था। कोने पर समोसा, भजिया और आलू वड़ा की दुकान। भीड़ लगा था और एक आदमी चूल्हे के पास बैठ कर आलू के पतले-पतले छल्लों को बेसन के पीले घोल में डूबा-डूबा कर तेल में ड़ाल रहा था। दायीं तरफ सफ़ेद संगमरमर का श्री शांतिनाथ श्वेताम्बर जैन मंदिर दिख रहा था। सूर्यास्त के बाद जैन लोग नहीं खाते है ऐसा सोचकर मैं अगियारी लेन में चल पड़ा। कुछ दूर पर फिर पेरिन नरीमन रोड़ मिला। इस बार पेरिन नरीमन रोड़ पर चलने लगा। कुछ ही दूर चलने पर एक बड़ा सा अगियारी दिखा। मानेकजी सेठ अगियारी। दरवाजे के दोनों तरफ लम्मासु, दाढ़ी वाले इंसान जिसका पंख जड़ित शरीर सांढ़ का होता है, चुपचाप सर पर पुरा अगियारी संभाले खड़े थे, अँधेरा में। कोई रौशनी नहीं नजर आ रही थे। और आगे चलने पर बोमनजी होरमरजी वाड़िया क्लॉक टावर दिखा। बिलकुल अँधेरे में। कंक्रीट का बना आतश भला कब रौशनी देता है। पता नहीं क्यूँ लेकिन अगियारी को देखकर संपत्ति जमा करने पूरा इंसानी व्यवस्था संदेहास्पद लगा। मेरी भूख बढ़ रही थी। दिमाग में कुछ खाने की तमन्ना थी। मैं आगे बढ़ा और दाई तरफ सर फिरोज़ शाह मेहता रोड़ पर चलने लगा। रोड़ लगभग सुनसान था। दो लोग फुटपाथ पे जगह के लिए झगड़ रहे थे। "तुम्हारे बाप का जगह है क्या ? एक ने चिल्लाया। "नहीं ! तुम्हारे बाप का भी नहीं है," दूसरे ने कहा। मैं आगे बढ़ता रहा। जहाँ सयैद अब्दुल्लाह बरेलवी मार्ग फिरोज़ शाह मेहता रोड़ को क्रॉस करता है वहाँ टोकरी में बिजली के खम्भे के ठीक नीचे एक बूढ़ा केला बेंच रहा था।

"कैसे है केला ?"

"10 रुपये का दो। "

"तीन मिलेगा ? मैंने पूछा।

"हाँ , ये वाले ले लो," कहते हुए उसने तीन दुबले से केले मेरे तरफ बढ़ा दिए।

"मुझे वही वाले तीन चाहिए ," मैंने कहा।

"नहीं , वो तीन नहीं मिलेगा। "

वैसे तीन मोटे केलों से रात तो कट ही जाएगी। क्या पता 13 रुपये का तीन दे दे। फिर सोचा कि रात को केले खाने से जुकाम तो नहीं हो जायेगा ? मैं इसबार सयैद अब्दुल्लाह बरेलवी मार्ग पर चलने लगा। चलने से ऐसा लग रहा था कि भूख मर रही है। पिछले दो घंटों से चले जा रहा था। कभी किसी सड़क पर और कभी किसी। क्या पता अगर ऐसे ही रातभर घूमता रहूँ तो भूख ही न लगे। घूम-घूम कर भूख मिटाने का अनुभव अद्‌भुद था।

सयैद अब्दुल्लाह बरेलवी मार्ग से दाहिने जन्मभूमि मार्ग पर मुड़ गया।

अभी भी दुकान खुले थे। एक आदमी ठेले के ऊपर अण्डा भुर्जी और बन बेच रहा था। बहुत लोग खड़े होकर खा रहे थे।

"बन और भुर्जी कैसे है ?"

"46 रुपए का दो अंड़े का भुर्जी और दो बन। "

मुझे उबला हुआ अंड़ा भी दिखा। "बॉयल्ड एग कैसे है ?"

"10 रुपए का एक ," उसने भुर्जी का छौक लगाते हुए कहा। एक तेज गंध नाकों में समा गई।

"एक अंड़ा 10 रुपए का ! मैंने चौंकते हुए कहा। दुकानवाले ने एक बार मुझे घूरकर देखा और फिर मसाले के छौक में अंड़ा फोड़ कर ड़ालने लगा। मैं फिर आगे बढ़ गया। "नागौरी चाय 8 रूपया" चाय के एक दुकान पर लिखा था। "गर्म दूध 28 रुपया का एक ग्लास," उसके नीचे लिखा था। सब मेरी पहुँच के बाहर था। मेरे पास केवल 13 रुपया था। भुर्जी की गंध ने फिर मेरी भूख बढ़ा दी थी। भूख महसूस होने पर थकान भी महसूस होने लगी। आगे और चलने का मन नहीं हो रहा था। हौसला कमजोर पड़ने लगा था। जन्मभूमि मार्ग अब कावसजी पटेल रोड़ से मिल गया था। रात के 10 बजने वाले थे। कावसजी पटेल रोड़ बाँए मुड़ते ही बाँस के खोमचा पर अंड़ा दिखा। दिमाग में अंड़ा जैसे समा गया था। एक आदमी खोमचे के बगल में खड़ा था।

"बॉयल्ड एग कैसे है ?"

"9 रुपये का एक ," उसने कहा।

"8 रुपए का एक दे दो ," मैने अंड़ों को छूते हुए आग्रह किया।

अंड़ेंवाला मेरे तरफ गौर से देखा और पता नहीं क्या सोचा और फिर एक अंड़े को छीलते हुए कहा "ठीक है। "

अंड़ा छीलकर बड़ी सफाई से उस अखबार के एक छोटे से टुकड़े पर रखकर अंड़े के दो टुकड़े किये और एक छोटे से प्लास्टिक की डिबिया से नमक और लाल मिर्च का मसाला छिड़का और मेरे तरफ बढ़ा दिया। मैंने जेब से 10 रुपए का नोट निकालकर बढ़ा दिया। जब तक वो पैसे वापस करता मैं उस प्लास्टिक की डिबिया को हिलाकर कागज़ पर और मसाला इकठ्ठा कर लिया। नमक है पता नही कब काम आ जाये। पैजामे की बायीं जेब को टटोला। उसमें पानी का बोतल रखा था। नमक के मसाले के साथ पानी भी तो पिया जा सकता है।

अंड़ा लेकर अभी घुमा तो बगल में यजदानी बेकरी दिखा। बड़ा सा मुख्य द्वार बंद हो गया था। बगल का छोटा दरवाजा खुला था। दरवाज़ा क्या वो काउंटर है क्योंकि सड़क की तरफ एक कंक्रीट का चबूतरा था। लकड़ी के बड़े काउंटर पर ब्रेड और तरह तरह के बन रखे थे। काउंटर पार एक बूढ़ा सा आदमी खड़ा था और इस पार पता नहीं ताक में एक बिल्ली बैठी थी। मैं यजदानी बेकरी के काउंटर की तरफ अंड़े के टुकड़ों को बायें हाथ में पकड़े चला गया।

एक बड़ी से बन कि तरफ इशारा करके पूछा ," ये कैसे है ?"

"5 रुपये का एक। मीठा वाला बन 10 रुपए का एक। उसमें किशमिश होता है," उसने कहा।

"कोई सस्तावाला बन नहीं है ?"

"ये ले लो 5 रुपयेवाला सादा बन।"

"वो क्या है ?"

"ब्रुन। ये ऊपर से कड़ा होता है लेकिन अंदर से मुलायम। मस्का बन में ब्रुन बन इस्तेमाल होता है।"

"मुझे और सस्तावाला बन चाहिए,"मैंने धीरे से कहा।

"लादी बन ले लो ," उसने कहा।

"क्या भाव है ?"

"15 रुपये का एक," कहते हुए उसने पावरोटी जैसा कुछ चौकोर पावरोटी बगल में रखी लकड़ी के अलमारी के ऊपर से उठाकर काउंटर पर रखा। उसमें 6 बन एक दूसरे से चिपके हुए थे 2x3 के क्रम में। वही बन जो भेल पूरी में इस्तेमाल होता है और वादा पाव में भी।

"इसका एक टुकड़ा मिलेगा ? मैंने धीरे से और सकुचाते हुए कहा।

"इसका क्या टुकड़ा होगा। यही एक पीस है।"

"15 के 5 हैं। 4 रुपये का दो जुड़ा हुआ बन तोड़कर दे दीजिए ," मैंने बड़ी विनम्रता से कहा।

"नहीं , ऐसा भी कही होता है ?"

दो जुड़ा हुआ बन उस 4 रुपए के बन से डेढ़गुना लगे। अंड़े के दोनों टुकड़ों के लिए एक -1 बन। अगर बच भी जाए बन तो नमक का मसाला तो है ही। मैंने सोचा "मेरे पास केवल 5 रुपए है ," मैंने उसकी आँखों में आँखे ड़ालकर कहा और एक -1 रूपया के पाँच सिक्कों को लकड़ी के काउंटर पर रख दिया।

पता नहीं क्या हुआ वो लादी बन के उस चौकोर से दो बन तोड़कर न्यूज़प्रिंट पेपर पर रखने लगा और फिर मेरी तरफ बढ़ा दिया। मैं दाहिने हाथ से आभार प्रकट करते हुए लिया और पीछे मुड़ा। काउंटर के आगे की चौखट से उतरकर अभी पीछे घूम ही रहा था कि एक बच्चा दौड़ते हुए आया और मुझसे बायीं तरफ से टकरा गया। मेरे दायें हाथ से पाव छूट गया और जब तक मैं संभालता बायें हाथ से अण्डों के दोनों टुकड़े जमीन पर थे और मेरे देखते-1 बिल्ली के गिरफ्त में। पाव के दोनों टुकड़े चबूतरा से नीचे गिरे और फिर एक गाड़ीवाला उन्हें बेरहमी से रौंदता चला गया।

मेरे बायें हाथ में अंड़े का गीला कागज़ और उसपर नमक का मसाला अभी भी चिपका था। •

डॉ. राममोहन विकास
शोध छात्र

अभ्यास

शिष्यों ने गुरु से पूछा कि विद्यार्जन में सबसे अधिक महत्व किसका है? गुरु बोले-विद्यार्जन में सबसे ज्यादा महत्व निरंतर अभ्यास का है। निरंतर अभ्यास करने से मूर्ख भी विद्वान हो जाता है, निरंतर परिश्रम पहाड़ को भी चूर-चूर कर देता है और निरंतर कार्य करने पर घुन भी बड़े पेड़ को धराशायी कर देते हैं।

गणतंत्र दिवस

हमारा देश स्वाधीन हुआ,
हमारा देश गणतंत्र हुआ
कितने त्याग और कुर्बानी के बाद
हमारा देश आजाद हुआ
देश की रक्षा स्वयं करें
ऐसा एक आह्वान करें।
जिससे हमारे पूर्वज औऱ हमारे बच्चे
हम पर नाज़ करें।
केवल सैनिकों का दायित्व नहीं है
देश की रक्षा
हर एक नागरिक का कर्तव्य
जिम्मेदारी है इसकी सुरक्षा।
काश कि ऐसा हो जाता,
हर नागरिक के मन में
भगतसिंह बस जाता,
इंकलाब का नारा लगाकर,
फिर कहीं वो समझ पाता,
कितने त्याग और कुर्बानी के बाद
हमारा देश आजाद हुआ,
हमारा देश स्वाधीन हुआ,
हमारा देश गणतंत्र हुआ।

रूपाली बोस

बंगाली जिसे इसके नाम से भी जाना जाता है बंगला मुख्य रूप से दक्षिण एशिया में बंगालियों द्वारा बोली जाने वाली एक इंडो-आर्यन भाषा है। यह बांग्लादेश की आधिकारिक और सबसे व्यापक रूप से बोली जाने वाली भाषा है और हिंदी के बाद भारत की 22 अनुसूचित भाषाओं में से दूसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। भारत के भीतर, बांग्ला भाषा पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा और असम राज्य में बराक घाटी की आधिकारिक भाषा है, और बंगाल की खाड़ी में अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में सबसे व्यापक रूप से बोली जाने वाली भाषा है और अरुणाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, मेघालय, मिजोरम और नागालैंड सहित अन्य राज्यों में महत्वपूर्ण आबादी द्वारा बोली जाती है। बंगाली साहित्य 1,300 से अधिक वर्षों के दौरान अपने सहस्राब्दी-पुराने साहित्यिक इतिहास के साथ, बंगाली पुनर्जागरण के बाद से बड़े पैमाने पर विकसित हुआ है।

मध्यकालीन

बंगाल के सल्तनत से रजत ताका, लगभग 1417

मध्यकाल के दौरान, मध्य बंगाली को शब्द-अंतिम के यौगिक, यौगिक क्रियाओं के प्रसार और अरबी और फारसी प्रभावों की विशेषता थी। बंगाली बंगाल की सल्तनत की एक आधिकारिक अदालत भाषा थी। मुस्लिम शासकों ने बंगाली के साहित्यिक विकास को बढ़ावा दिया। बंगाली सल्तनत में सबसे अधिक बोली जाने वाली मौखिक भाषा बन गई। इस अवधि में फारसी-अरबी शब्दों को बंगाली शब्दावली में उधार लेते देखा गया। मध्य बंगाली के प्रमुख ग्रंथों (1400-1800) में चंडीदास की श्रीकृष्ण कीर्तन शामिल है।

आधुनिक

बांग्ला भाषा का आधुनिक साहित्यिक रूप 19 वीं और 20 वीं शताब्दी के दौरान नादिया क्षेत्र में बोली जाने वाली बोली के आधार पर विकसित किया गया था, जो एक पश्चिम-मध्य बंगाली बोली थी। बंगाली डिग्लोसिया का एक मजबूत मामला प्रस्तुत करता है, जिसमें भाषा के साथ पहचान करने वाले क्षेत्रों की बोलचाल की भाषा से साहित्यिक और मानक रूप बहुत भिन्न होता है।

लिपि बांग्ला

অ	আ	ই	ঈ	উ	ঊ	ঋ
shôrô ô ô/o [ɔ~o]	shôrô a a [a]	hrôshô i i [i]	dirghô i i [i]	hrôshô u u [u]	dirghô u u [u]	hrôshô ri ri [ɹi]
এ	ঐ	ও	ঔ			
e/ê e [e~ɛ~æ]	oi oi [oi]	o o [o]	ou ou [ou]			
ক	কা	কি	কী	কু	কূ	কৃ
ka	ka	ki	ki	ku	ku	kri
কে	কৈ	কো	কৌ			
ke	koi	ko	kou			

বংগালী সাহিত্য का इतिहास तीन अलग-अलग युगों में विभाजित किया गया है - पुराना बंगाली (950-1350), मध्य बंगाली (1350-1800) और आधुनिक बंगाली (वर्तमान में 1800)। प्राचीन बंगाली साहित्य चार्यपद से शुरू होता है जो कविताओं का संग्रह है। यह एक पांडुलिपि थी जो अलो अंधारी भाषा में लिखी गई थी।

मध्य युग में बांग्ला साहित्य

मध्य युग के बंगाली साहित्य ने अपार विकास देखा। इसमें प्रारंभिक वैष्णव साहित्य, संस्कृत अनुवाद, मंगल काव्य, चैतन्य मंगल, बाद में वैष्णव साहित्य, मुस्लिम कवियों की रचनाएँ शामिल हैं। प्रारंभिक वैष्णव साहित्य में बोरू चंडीदास द्वारा श्री कृष्ण कीर्तन और श्री कृष्ण काव्य शामिल हैं। पदावली भगवान कृष्ण और राधा के प्रेम संबंधों पर केंद्रित थी। प्रारंभिक संस्कृत अनुवादों में कृत्तिबास ओझा की 'श्री राम पांचाली' और मालाधर बसु द्वारा 'श्री कृष्ण विजय' शामिल थे। कई देवताओं को लोकप्रिय बनाने के लिए मंगलकवियों की रचना की गई। मध्यकालीन बंगाली साहित्य में मनसामंगल और चंडीमंगल और धर्ममंगल की रचना देखी गई। चैतन्य महाप्रभु पर भी कई रचनाएँ हुईं। इसमें जयानंद के चैतन्य मंगल, लोचन दासा के चैतन्य मंगल और कृष्णदास कविराज के चैतन्य चरितामृत शामिल हैं। बाद के वैष्णव साहित्य में बलराम दास की पदावली, ज्ञानदास की पदावली

और गोविंदा दास कविराज की पदावली शामिल थीं। कविंद्र परमेश्वर, श्रीकर नंदी और काशीराम दास द्वारा किए गए महाभारत अनुवाद इस युग के उत्पाद हैं। शाक्त पदावली और बाल गीत मध्यकालीन बंगाली साहित्य की प्रमुख रचनाएँ हैं।

हमारे देश में विभिन्न भाषाएं एवं बोलियाँ भारत की अनेकता में एकता की सूत्रधार हैं। प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से ये भाषाएं देश की उन्नति में अहम् भूमिका निभाती हैं। बांग्ला भाषा भी उन्हीं भाषाओं में एक है। देश के एक भू-भाग में रहने वाला व्यक्ति यदि किसी कारणवश देश के दूसरे भाग में रहने लगता है, तो वह अनायास ही वहाँ की बोली भाषा सीख जाता है। यदि हम थोड़ा रुचि ले तो निश्चित ही एक नई भाषा को भी सीख सकते हैं। •

यह लेख विकीपीडिया पर उपलब्ध आंकडों के आधार पर तैयार किया गया है।

राजभाषा प्रकोष्ठ

रावण मन में हँसता है

रावण वध को आतुर मानव
धनुष बाण जब कसता है
तब रावण मन में हँसता है।

अज्ञानों से घिरा हुआ
छल-कपट से ढांचा सजा हुआ
तृष्णाओं में फँसा हुआ
जब मानव हाथ मचलता है
तब रावण मन में हँसता है।

काम-क्रोध से भरा हुआ
राग-द्वेष से सना हुआ
पशुवत सा धरती पड़ा हुआ
जब मानव आग उगलता है
तब रावण मन में हँसता है।

सर्पेंद्रिय को हार चुका
अनियंत्रित हो लाचार हुआ
तन-मन से बीमार हुआ
जब मानव तरकश भरता है
तब रावण मन में हँसता है।

जल, भोज्य, श्वास से पिटा हुआ
पृथ्वी, वन, तटिनी लुटा हुआ
मिथ्या वनवासी बना हुआ
रावण वध को आतुर मानव
धनुष बाण जब कसता है
तब रावण मन में हँसता है।

लोभ मोह से तसा हुआ
समझौतों में फँसा हुआ
सहस्त्र सरों से सजा हुआ
जब मानव स्वयं को राम समझता है
तब रावण मन में हँसता है।

सोचे रावण हे मानव !
तुम कभी विजय न पाओगे
आदर्श राम के यदि पाये तो
मुझको नहीं जलाओगे
तुच्छ, विकारी मानव जब
प्रत्यंचा को कसता है
तब रावण मन में हँसता है
तब रावण मन में हँसता है।

सोमनाथ डनायक

अंतर्विरोध और विरोधाभास

अन्तर्विरोध और विरोधाभास वास्तव में अलग-अलग दो पारिभाषिक शब्द हैं जिनके विकास की पृथक जमीन भी है, परंतु मार्क्सवादी विचारधारा के विकास क्रम में अर्थगत सामंजस्य के कारण दोनों शब्द परस्पर जुड़ गए हैं। अंतर्विरोध अंग्रेजी कन्ट्राडिक्शन का हिंदी पर्याय है। मार्कस्वाद ने ही इसे नया अर्थ दे दिया है और अब इसी अर्थ के लिए यह शब्द रूढ़ सा हो गया है।

समाज के विकास की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए मार्क्सवादी विचारकों ने रेखांकित किया कि समाज में मुख्य रूप से दो वर्ग रहते हैं जिनके बीच निरंतर संघर्ष चलता रहता है। यह संघर्ष तक तक चलता रहता है जब तक गुणात्मक परिवर्तन के द्वारा तीसरी और नई परिघटना उत्पन्न नहीं हो जाती और नए वर्ग नहीं जन्म ले लेते। नए वर्ग के जन्म लेने के बाद समाज में नए अन्तर्विरोध जन्म ले लेते हैं। और नया संघर्ष आरम्भ हो जाता है। इसी तरह से समाज का विकास होता रहता है। मार्क्सवादी दर्शन के अनुसार समाज का निरंतर विकास होता रहता है। इतिहास कभी पीछे नहीं मुड़ता और न तो इतिहास अपने आप को दोहराता है। समाज के विकास की प्रक्रिया इन्हीं अन्तर्विरोधों की देन है। ये अन्तर्विरोध निरंतर चलते रहते हैं। इनमें एक मुख्य अन्तर्विरोध है और शेष गौण अन्तर्विरोध होते हैं। समाज को बदलने और एक बेहतर समाज व्यवस्था के निर्माण की आकांक्षा रखने वाले लोगों को इस समाज के यथार्थ का विश्लेषण और मुख्य तथा गौण अंतर्विरोधों की पहचान की जरूरत सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके आधार पर संघर्ष की दिशा तय की जाती है। इस तरह अंतर्विरोध शब्द खासतौर पर राजनीतिक चिंतन के क्षेत्र में प्रयुक्त होता था जहाँ से मार्क्सवादी आलोचना के विकास के दौरान साहित्य में भी प्रयुक्त होने लगा। साहित्य में यह शब्द आमतौर पर आलोचना के क्षेत्र में प्रयुक्त होता है।

विरोधाभास का अर्थ है विरोध का आभास । संस्कृत साहित्य में विरोधाभास एक अलंकार है। अविरोधेअपि विरुद्धत्वेन यद्वच (काव्य-प्रकाश) अर्थात् जहाँ विरोध न होने पर भी विरोध की प्रतीति हो। घनानंद की रचनाओं में विरोधाभास भरे पड़े हैं- "उजरनि बसी है हमारी अंखियानि देखौ।"

इसी तरह प्रसाद ने भी लिखा है, शीतल ज्वाला जलती है, ईधन होता दृगजल का।

अंतर्विरोध से जुड़ने के साथ ही विरोधाभास भी अपने निश्चित पारिभाषिक अर्थ की प्रतीति कराने लगता है। यहाँ विरोधाभास का तात्पर्य है अंतर्विरोध की भ्रांत पहचान। व्यवस्था-परिवर्तन की लड़ाई लड़नेवाले योद्धाओं के लिए जरूरी शर्त है सही अंतर्विरोध की पहचान, ताकि वे अपने संघर्ष की सही दिशा निर्धारित कर सकें। यदि सही अंतर्विरोध की पहचान नहीं हो सकी तो संघर्ष का परिणाम भी अपने पक्ष में नहीं होगा, चाहे संघर्ष में जितनी भी ताकत झोंक दी गई हो।

तात्पर्य यह कि अंतर्विरोध और विरोधाभास मार्क्सवादी आलोचना शास्त्र में इस्तेमाल किया जाने वाला अपेक्षाकृत नवीन पारिभाषिक शब्द है। •

आधार ग्रंथ - आधार आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह ।

आधुनिक हिंदी आलोचना संदर्भ एवं दृष्टि, रामचंद्र तिवारी।

मैं जिस हॉस्टल में रहता हूँ वहां मेरे अलावा 429 छात्र और भी रहते हैं। ये लगभग समान उम्र वाले सभी लड़के हैं-बोरियत पैदा कर देने वाली सामाजिक संरचना। इस संख्या में हर साल उतार-चढ़ाव आता है। जिसके तमाम कारण हैं। कुछ लोग सुन्दर उम्मीदों और निर्झर नदी जैसा जोश लेकर इस संस्थान में आते हैं। वहीं, कुछ कोर्स पूरा करने के बाद आशंकाओं और संभावनाओं के गठजोड़ से पैदा हुई मनःस्थिति के साथ आममर्रा की जिंदगी के बस-स्टॉप के लिए निकल पड़ते हैं। अल्पसंख्यकों का हिस्सा भी इस 430 की संख्या में शामिल है। ये अल्पसंख्यक वे लोग हैं जो निर्धारित समय से पहले बगैर कोर्स पूरा किये या मजबूरन छोड़ कर चले जाते हैं। असुरक्षाओं ने इस अल्पसंख्यक समूह को भी बांटकर रख दिया है। समूह के कुछ साथियों को मिले सरकारी नौकरी या बेहतर अवसर की खबर हफ़्ते भर मेस से अलग-अलग विंग के अलग-अलग कमरों तक दौड़ लगाती ह। ये खबरें कमरे के अन्दर कुछ देर अफरा-तफरी मचाती हैं, फिर फेसबुक-यूट्यूब देखकर 'होइहि सोई जो राम रचि राखा' का चादर तानकर सो जाती हैं। खुद ही एक शानदार विदाई पार्टी का आयोजन करके ये 'किस्मत वाले' साथी बरसों से बधाइयों और तारीफों के आभाव में सूखाग्रस्त ज़िन्दगी को कोल्डड्रिंक और तंदूरी चिकन की मदद से हरा-भरा बनाने की कोशिश करते हैं। जबकि, इसी अल्पसंख्यक समूह का एक तबका मजबूरी, अनहोनी या आकांक्षाओं के दम घुट जाने के चलते अपने कमरों की दीवारों पर अपनी भाषा में बड़े-बड़े अक्षरों में हौसला बंधाने वाले कविताएं और विचार लिख कर चला जाता है। ऐसे कमरों में अक्सर बाबा साहब, भगत सिंह, चेग्वेरा, विवेकानंद, आदि दीवार पर चिपके मिल जाते हैं। कुछ उखड़ने के कगार पर होते हैं, तो कुछ को adhesive tape का निर्धारित समय के लिए कंडीशनल सपोर्ट प्राप्त रहता है। ये साथी हमारे बीच से उतनी ही शांति से चले जाते हैं जितनी शांति से सबेरे पेपरवाला लड़का दरवाजे के नीचे से अखबार खिसका कर चला जाता है। अमूमन ये साथी दिन के 24 घंटों का बँटवारा सिर्फ काम और फिर दोबारा काम करने के लिए आराम के बीच जबरन और गैर-बराबरीपूर्ण ढंग से कर देते हैं। हॉस्टल में रहने वाले ज्यादातर लोग इनकी पहचान नाम से नहीं चेहरे से करते हैं। मेस, कैंटीन और एकेडमिक एरिया में जब ये दिखाई देते हैं, मन में उस मजदूर की छवि उभरती है जो चंद लम्हों को चुरा कर फैक्ट्री के गेट से बाहर निकल कर चाय के ठेले पर बीड़ी सुलगाता है। चाय की प्याली खाली होने में और बीड़ी ख़तम होकर बुझने में 7-8 मिनट से ज्यादा नहीं लगता, मानों चाय और बीड़ी को भी उस मजदूर के एक-एक मिनट वक़्त का अहमियत मालूम हो। ये साथी कहाँ से हैं, किस डिपार्टमेंट में क्या पढ़ाई करते हैं, इनके चेहरों पर किस बात की शिकन डेरा डाले रहती है, यह सब जानने के अलावा हमारे पास खुद को मशगूल रखने के भरपूर साधन उपलब्ध हैं। वैसे भी आजकल इंसान अपने आप को सिमटाने में पूरी शिद्दत से लगा हुआ है।

पिछले चार सालों में घटी कई घटनाओं और पैदा हुए संयोगों के दौरान वैचारिक और स्वाभाविक सामनताओं ने मुझे हॉस्टल में रहने वाले कुछ साथियों के साथ जोड़ा। ये साथी हिन्दुस्तान के अलग-अलग प्रान्तों से हैं। वे फोन पर अपने घर वालों से अपनी भाषा में बात करते हैं। कुछ साथियों के पारिवारिक संवेदना और स्थिति को बिना उनसे पूछे जानने के लिए घरवालों से बातचीत के दौरान उनके द्वारा बीच-बीच में प्रयोग किये जाने वाले अंग्रेजी शब्दों को गौर से सुनना पड़ता है। कुछ धर्मी हैं, कुछ विधर्मी और कुछ धर्म के मुखौटे का सलीके से मुआयना कर रहे हैं। बातचीत से यह अंदाजा लगता है कि इन साथियों के घर वाले भी, ज्यादातर की तरह ही, खेत-खलिहान से ज्यादा बाज़ार पर निर्भर हैं। हिन्दू नाम वाले साथियों के नाम में जुड़े अनुलग्नक से उनकी जाति का पता लग जाता है। जबकि, कुछ के नाम समाज में अलग-अलग सांस्कृतिक पहचानों की मौजूदगी का एहसास कराता है। पिछले कुछ दिनों से मुझे अपने साथियों के साथ होने वाले चर्चा-विचार में एक ख़ास नज़रिए की कमी खलने लगी है। चर्चा में हम तर्क का लबादा पहनाकर जिन मिसालों को पेश करते हैं वे न तो किसी आदिवासी घर के चूल्हे पर पके होते हैं और न ही दलितों के कुओं पर नहाये होते हैं। सब कुछ अधपका, मलीन और दुर्गन्धयुक्त लगने लगा है। हम सभी साथी मौका मिलने पर नेताओं को बेधड़क गरियाने और पूंजीपतियों पर सॉफ्ट टोन में अपने गुस्से का इज़हार करने से कभी नहीं चूकते हैं। देश में लोकतंत्र को बचाए रखने में हमारा यही एकमात्र योगदान है। समय-समय पर दुनिया के तमाम मुल्कों में लगातार बढ़ती असमानता, हिंसा, मजदूरी में कटौती, सरकार का मजदूर विरोधी रवैया, वर्ग, जाति, नस्ल और लिंग के आधार पर दमन और अत्याचार, साम्राज्यवादी हमले, आदि से जुड़ी समस्याओं पर हम चिंता भी प्रकट करते हैं। और, मानव सभ्यता पर मंडराते इस घोर संकट पर borrowed ideas को अपने लहजे में

अपनी बात की तरह रख कर हम अपने तरक्कीपसंद और रौशन दिमाग होने वाले तमगे को झाड़-पोंछ लेते हैं। लेकिन, लगभग मिलती-जुलती सोच-समझ और संवेदनशीलता वाले हम साथियों ने कभी भी यह जानने की जहमत नहीं उठाई कि इन 430 लोगों में ऐसे कितने लोग हैं जिनके खेत की फसल अभी भी कटने के बाद साहूकार या गाँव के बाबूसाहब के खलिहान में गिरती है और जिनके घरों की दीवारें थककर ढहने लगी हैं।

बहरहाल, मुझे इस बात पर पूरा भरोसा है कि मेरे हॉस्टल में भी दलित और आदिवासी समुदाय से आने वाले साथी मौजूद होंगे। उनकी संख्या भले ही सैकड़ा में न हो, दहाई में तो जरूर होगी। क्योंकि इस समुदाय के साथी अपने-अपने परिवेश में संघर्षरत हैं और कुछ सफल भी हो रहे हैं। बाकियों की तरह ये साथी भी एक बेहतर माहौल में एक नए समाज की कल्पना गढ़ने और उसे साकार करने के उद्देश्य से इस संस्थान में आते हैं। चूँकि वर्तमान राजनीतिक हालात ही भावी सामाजिक संरचना और अर्थव्यवस्था की रूपरेखा तय करती है इसलिए इन साथियों पर जिम्मेदारी दोहरी है: वर्तमान राजनीतिक विमर्श को बदलना और समतामूलक समाज की एक मजबूत नींव डालना। आंशिक मुक्ति की भावना के साथ आये इन साथियों की प्रेरणा उसी समय औंधे मुंह गिर कर दफ़न हो जाती है जब इस संस्थान में भी उनका साक्षात्कार नए रंग-रूप में कुंडली मारे बैठी जाति व्यवस्था से होता है। 'उच्च जाति' से ताल्लुक रखने वाले हमारे साथियों (जिसमें मैं भी शामिल हूँ) को मेस में मजदूर साथियों के 'टाइटल' (surname) के आधार पर काम का बँटवारा और रोजाना कमरे, कॉरिडोर और वाशरूम की सफाई करने वाले साथियों में जातीय समानता जरा भी नही चौकाती। उनके लिए तो यह नॉर्मल बात है। जबकि भेदभाव आधारित यह व्यवस्था हमारे बीच रहने वाले छात्रों के एक तबके को सुबह-दोपहर-शाम एक 'लोकतान्त्रिक देश' में उनके समुदाय की सामाजिक स्थिति से वाकिफ कराती रहती है। उन्हें यह भी याद दिलाती रहती है कि महज बोली, रोटी और पहनावे में बदलाव उन्हें जातिगत उत्पीड़न से मुक्ति नहीं दिला सकती है।

रोजाना घटने वाली इस हिंसा को देखने के बावजूद भी 430 छात्रों में से शायद ही किसी ने 'नैचुरल' बन चुकी इस अमानवीय व्यवस्था पर कभी भी सार्वजनिक रूप से अपना रोष प्रकट किया हो। यह माना जा सकता है कि मध्यम वर्गीय स्वर्ण पृष्ठभूमि से आने वाले लोगों के लिए सामाजिक न्याय से ज्यादा व्यवस्था का 'सुचारू ढंग' से चलना ज्यादा महत्वपूर्ण हो। इसीलिए यह यथास्थितिवाद उन्हें ज्यादा परेशान नहीं करती है। और यही नहीं, ऐतिहासिक अन्याय के इस मुद्दे को नजरअंदाज करके वे खुद को जातीय मानसिकता से परे घोषित कर देते हैं। लेकिन, आखिरकार वे लोग क्यों चुप्पी साधे हुए हैं जो हर दिन अपनी पहचान की वजह से एक खास तरह की मानसिक हिंसा के शिकार होते हैं, और यह तमन्ना भी रखते हैं कि उनकी आने वाली पीढ़ी के लिए एक जाति विशेष में जन्म लेना 'दुर्घटना' न साबित हो। कहीं ऐसा तो नहीं ये साथी भी पूंजीवादी संस्कृति के चपेट में आकर जातिगत हिंसा पर सवाल करने को पिछड़ेपन का लक्षण मान रहे हों? अगर ऐसा है तो यह त्रासदीपूर्ण है। यह त्रासदी सिर्फ शिक्षा व्यवस्था के लिए ही नहीं है जिसे समाज agent of change के रूप में देखता है, उस agency के लिए भी है जो अपने ऊपर हो रही हिंसा को बाकियों की तरह ही एक 'सामान्य घटना' मानकर नजरअंदाज करने लगी है। उस समुदाय के मौन रहने का कारण कुछ और भी हो सकता है जिससे मैं अनभिज्ञ हूँ। खैर, कोई बोले चाहे न बोले, 23 साल का नवयुवक रिंकू वाल्मीकि जो सुबह 6 बजे से रात 10 बजे तक हाथ में वाइपर थामे रहता और जिसकी नज़र मेस परिसर में रत्ती भर भी गन्दगी बर्दाश्त नही करती है ने हाल ही में खनकती आवाज में अपनी एक इच्छा मुझसे साँझा की: "भईया, हम भी लोई काटना चाहते हैं, रोटी बेलना चाहते हैं। बहुत मन करता है कि कुक की तरह हम भी रिफाइंड में पनीर छाने।" मैं उससे नज़र नहीं मिला सका। मेरा सर नीचे झुक गया, सफ़ेद चमचमाते फर्श की तरफ। गीले पोंछा का कालापन और दुर्गन्ध हमेशा के लिए मेरे चेतन पर काबिज हो गया। ऐसा बिल्कुल भी नहीं है कि जातीय पहचान सिर्फ 'निचली जाति' के लोगों का ही उत्पीड़न करती है। हमारे मेस में काम करने वाले श्रीकांत शुक्ला जो कि रायबरेली के रहने वाले हैं कहते हैं, "हम अपने गाँव-घर मा होइत तव ई सब न कए पायित। रायबरेलियो मा बहुत होटल हय, उहों काम मिल जात लेकिन तब बिरादर-पाटीदार लोग कहते कि फलना तौ दूसर कय झूठ माँजत हय...अब बाल-बच्चन कय पेट पालेक हय तौ कुछ न कुछ करेक पड़ी। यही चलते तो घर-परिवार छोड़-छाड़ हिंया पड़ा हन।" सामाजिक उलाहना और रोजी-रोटी के इस द्वंद्व के चलते श्रीकांत को हर शाम फोन पर ही अपने दो छोटे-छोटे बच्चों और पत्नी से बात करके संतोष करना पड़ता ह। बगैर इस बात को ध्यान में रखे कि इंसान की आर्थिक

स्थिति क्या है और वह इंसान महिला है या पुरुष, यह जाति व्यवस्था किन-किन स्तरों पर किस तरह की हिंसा करती यह समझना बेहद मुश्किल है।

ये सब बातें मैं इस इसलिए नहीं लिख रहा हूँ कि मेरे अन्दर मध्यम-वर्गीय अपराधबोध सक्रिय हो गया है, और न ही इसलिए कि मेरे अन्दर मानवीय संवेदना या नैतिकता के किसी नए बीज का अंकुरण हुआ है। यह संस्थान और यहाँ का समुदाय हर दिन मुझे खुद के और समाज के बारे में शिक्षित कर रहा है। सीखने की यही प्रक्रिया मुझे मेरे खोखलेपन से भी अवगत करा रही है। यह खोखलापन भी मुझे परेशान न करता यदि क्रांति के विज्ञान का मूल सिद्धांत में मेरा अटूट विश्वास न होता जिसे मैक्सिम गोर्की के सरल और सटीक शब्दों में रखना बेहतर होगाः 'मेरे लिए इंसान से परे कोई विचार नहीं है, मेरे लिए इंसान और केवल इन्सान ही प्रकृति की सभी शक्तियों का आश्चर्यकर्मी और भावी स्वामी है। हमारे इस संसार की अत्यंत सुन्दर वस्तुएं हैं जिन्हें श्रम से निर्मित किया गया है, इंसान के कुशल हाथों से बनाया गया है, और हमारे सभी विचार श्रम की प्रक्रिया से ही पैदा होते हैं'। इस सिद्धांत के प्रति मेरी घोर निष्ठा ही आज मुझे कठघरे में खड़ाकर के कई गंभीर सवाल पूछ रही है। कोई विचार इतना ताकतवर कैसे हो सकता है कि वह कुशल हाथों को उसके पसंदीदा काम से दूर रखे? एक खास तरह की पहचान निर्बाध दौड़ लगाने वाले श्रम के पैरों में बेड़ियाँ कैसे डाल सकती है? ऐसे और भी कई सवाल जिन्हें मैं अभी शब्दों में पिरो नही पा रहा हूँ, शायद इसलिए क्योंकि वे ज्यादा जटिल हैं। फिलहाल, सवाल पूछते रहना है और साथियों के बीच संवाद जारी रखना है। सवाल और संवाद ही एक नए समतामूलक समाज का आधार होगा, यह मेरा मानना है। •

रूपम जैन, शोध छात्र

लेख में 'अल्पसंख्यक' शब्द का प्रयोग उद्देश्यपूर्वक किया गया है। मौजूदा दौर में सार्वजनिक बहसों और राजनीतिक विमर्शों ने 'अल्पसंख्यक' शब्द को गैर-हिन्दू समुदायों का एक पर्याय-पहचान के रूप में संकुचित कर दिया है जिसका उपयोग समाज में अल्पसंख्यक विरोधी भीड़-मानसिकता पैदा करने और फिर समुदायों के बीच विभाजन रेखा खींचने में किया जाता है। वास्तव में, 'अल्पसंख्यक' शब्द एक demographic category है जिसका उपयोग सामाजिक न्याय हासिल करने के लिए किया जाना चाहिए। किसी व्यवस्था या परिवेश में किसी भी पहचान (धर्म या जाति) व्यक्ति की स्थिति एक अल्पसंख्यक की हो सकती है यदि वह वहां अधिकांश लोगों से विचार, खान-पान, भाषा-पहनावा, आस्था, आदि के मामले में भिन्न है। इस भिन्नता का सम्मान करते हुए समाज में आर्थिक-सामाजिक समानता स्थापित करने के लिए अल्पसंख्यक समूह के सदस्यों को समाज में बतौर एक नागरिक सम्मानपूर्वक जीवन मुहैया कराना एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था की जिम्मेदारी है।

विकास, शोध छात्र

मैं तुमको ढूंढ रहा हूँ

ओ शाम मस्तानी, कहाँ हो तुम
मैं तुमको ढूंढ रहा हूँ ।
जहाँ तुम्हारा साया था
और पवन, धीमी - धीमी
जहाँ पक्षियों का कलरव था
खुशुबू पुष्पों की, भीनी - भीनी
मैं भूल चूका हूँ, नमी
सुखी मिट्टी में सलिल को खोज रहा हूँ
ओ शाम मस्तानी, कहाँ हो तुम
मैं तुमको ढूंढ रहा हूँ ।
खेला मैं हरी दूब पर
खाये मिट्टी के ढेले
थाम अंगुलियां पापाजी की
जब हमने देखे थे मेले
आँखें मूंदे, कुर्सी पर
बचपन के साथियों संग ही खेल रहा हूँ
ओ शाम मस्तानी, कहाँ हो तुम
मैं तुमको ढूंढ रहा हूँ ।
तुम भी मुझको ढूंढते
चली आओ कभी
इन निर्जन उजालों में
मार दो थपकी कभी आकर
मेरे इन शख्त गालों पर
दौड़ती सड़कों पे खुदको ढूंढ रहा हूँ,
ओ शाम मस्तानी, कहाँ हो तुम
मैं तुमको ढूंढ रहा हूँ ।

एकाकी पल

जीवन के एकाकी पल में
यदि तुम मेरे साथ न होती
न ही प्यार का अनुभव होता
जीने की भी चाह न होती।

तरूओं पर भी पुष्प न खिलते
भँवरों का गुंजन गान न होता
अधर तरसते रहते निर्मम
मधुर मिलन की आस न होती
यदि तुम मेरे साथ न होती।

आकाश न ही तारों से सजता
मादक मोहिनी रात न होती
धरती प्यासी ही रह जाती
सावन में बरसात न होती
यदि तुम मेरे साथ न होती।

सागर लहर लहर लहराता
सरिता में आतुर लहर न होती
सूरज झूम-झूम रह जाता
कलियों में खिलाने की चाह न होती
यदि तुम मेरे साथ न होती।

कोयलिया मधुमय राग न गाती
बासुरिया में भी तान न होती
न ही चमन में फूल महकते
पक्षी कुल की चाह न होती
यदि तुम मेरे साथ न होती।

मन का आकुल पंछी उड़ जाता
जीवन का एहसास न होता
न ही गगन में चाँद चमकता
सूरज में भी ताप न होती
यदि तुम मेरे साथ न होती।

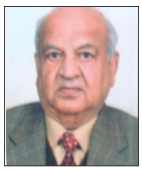

आर के दीक्षित
परिसरवासी

शाम

मेरी शाम
शाम कट जाती है
और पलंग के इसी कोने पे टिका टिका
नीली चादर में बिखरे आँचलों में
तुम्हारा आँचल देखता रहता हूँ।
थिरकती साँसों में उलझ, जब कराह उठता हूँ,
तब तुम खिलखिला कर पिघल जाती हो
अँधेरे के साये में
और मैं इंतजार करता रह जाता हूँ
फिर इसी शाम का।

प्रदीप सिंह, पूर्वछात्र

नीम का पेड

आज नीम का पेड़ पुराना, याद आया।
जिस पर हमने बचपन गाया, याद आया।
कुछ शाखें थी, कुछ पत्ते थे,
और लटकते कुछ बच्चे थे।
बीत गया जो सारा बचपन, मुस्काया।।
आज नीम का पेड़ पुराना, याद आया।।
घर के आगे, सड़क से पहले,
उसका वो दरबार, वहाँ था।।
कुछ छोटे-छोटे पैरों का,
एक पूरा संसार वहाँ था।
वहीं खेल था, वहीं कूद थी,
और वहीं पड़ती थीं, डाँटें।।
खेल-कूद और डाँटों का,
वो अदभुत संगम, याद आया।
आज नीम का पेड़ पुराना, याद आया।।
पेड़ नहीं था, वो जीवन था।
खुद में ही वो उपवन था।।
तेज हवा के झोंको ने था जिसे गिराया।
आज नीम का पेड़ पुराना यादा आया।।

अंकित यादव, छात्र

बूढा

मैंने देखा, म्लान सा चेहरा।
ठंड में ठिठुरता, सिकुड़ता हुआ सा।
ताक रहा था वो अम्बर को,
शायद भोर का इंतजार था।

कतिपय, रवि की रश्मियाँ,
शायद कुछ आराम देंगीं।
इस गलन भरी सर्दी में,
कँपकपाहट हर लेंगीं।

चहुंओर अजब सन्नाटा था।
शायद सबको शीत का भय था।
साँझ ढले सब दुबक गये थे।
राहों को विधवा कर गये थे।

पर ये बूढा सिसक रहा था।
शायद भाग्य को कोस रहा था।
अपने ही कर्मों का लेखा,
चिथडों में लिपटे भोग रहा था।

इन्तजार था नई भोर का।
शायद अपने भाग्योदय का।
नये युग के सूत्रपात का।
सुखमय पल के आगाज का।

सुबह हुई रजनीकर डूबा।
फैला रवि का प्रखर प्रकाश।
हुई स्वर्णमय सारी धरती।
हुआ उज्ज्वल सारा आकाश।

पर बूढा निस्पंद पडा था।
अपलक नभ को ताक रहा था।
धूप-दर्शन की आस लिये ही,
अपना चोला छोड चुका था।

पेड से गिरती ओस की बूँदें,
उसके मुख पर टपक रहीं थीं।
शायद प्रकृति के आँसू बन,
उसको दे अन्तिम विदा रहीं थीं।

डॉ. अंकुश शर्मा
विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

अभियंता दिवस

आज पंद्रह सितंबर है
अभियंता दिवस
मोक्षगुंडम विश्वेश्वरैया का जन्मदिन
यूँ तो कोई बड़ा त्योहार नहीं है
स्कूल में कभी मनाया भी नहीं गया
पर मुझे याद रहता है ये दिन
बचपन में
जब मैं छोटी थी
और पप्पा थे
इस दिन घर में उत्साह का माहौल होता था
दीदी और मैं स्कूल से लौटते ही
कपड़े बदलकर संघ भवन चले जाते थे
संघ भवन
डिप्लोमा अभियंता संघ, झारखंड का कार्यालय था
जिसके अध्यक्ष तब पप्पा हुआ करते थे
वहाँ की दीवारों पर पप्पा का नाम भी लिखा होता था
अब भी है
साथ में उनकी एक माला चढ़ी तस्वीर भी है
वहाँ पहुँचकर सबसे पहले मैं
चहकते हुए पप्पा को पुकारती
फिर उनके सभी दोस्तों के पैर छूती
परीक्षा के नंबर पूछे जाते
फिर पप्पा के कुछ करीबी दोस्त
मेरी तारीफ़ों के पुल बाँधने लगते
कुछ देर बाद पप्पा हमें खाना खिलाने
छत पर ले जाते
रास्ते में मैं उनसे दुनिया भर के सवाल करती
उन्होंने स्पीच दी या नहीं
नीली शर्ट वाले अंकल कौन थे
सीढ़ियों पर मार्बल कब लगे
और जाने क्या-क्या...
जाने के बाद हम दोनों बहनें
पप्पा के नाम वाले पत्थरों को ढूंढते
उन पर लिखी चीज़ों को पढ़ते
और फिर वापस छत पर चले जाते
पास वाले नंदन पहाड़ पर
बिना टिकट पहुँचने की योजना बनाने
घर हम पप्पा के साथ ही पैदल लौटते
पप्पा खाने के बारे में पूछते
अतिथियों की कुल संख्या भी बताते
मैं कुछ और अंकलों के नाम पूछती
फिर कहती, पप्पा, यह मोछमुंडम कैसा नाम है?
इस पर दोनों ही हँसने लगते
मेरे सवालों में ही सफर बीतता...
हम अपने घर की गली में होते
जब मम्मी का ये जानने को फ़ोन आता
कि हम कितनी देर में आयेंगे
मेन गेट पर पहुँचते ही मैं चिल्लाती
मम्मी...
आज मैं भी एक इंजीनियर हूँ
पर इस दिन का कोई मतलब नहीं है मेरे लिए
बहुत हुआ तो थोड़ा पढ़ लूंगी विश्वेश्वरैया के बारे में
ये जानने के लिए
कि उनका योगदान सच में विशेष था
या इस दिन को मानना बस एक राजनीतिक योजना है

अर्चना कुमारी, पूर्व छात्रा

लाखों करोडों साल पुराने इस समय की एक छोटी सी खिड़की से झाँक रहे हैं

मैं, तुम और हम सभी ।

ये भी तय है की ये खिड़की जल्द बन्द हो जाएगी और नई खिड़कियां खुलेंगी, जहाँ हमारा वजूद पुरानी, धुंधली याद की तरह होगा ।

फिर भी इस दौड़ती ज़िन्दगी में बहुत अहम सवाल करना भूल जाता हूँ और सोचता हूँ कल बेहतर बना लूँ फिर सोचूँगा ।

लेकिन कल बेहतर कभी नहीं होता।

किसी और की ज़िन्दगी जीना बहुत आसान है, सवाल पूछने से आप बच जाते हो, दिमाग़ पर जोर नहीं पड़ता, जो सब करते हैं वो करते चले जाओ लेकिन उतना ही तकलीफ देह भी होता है।

कोई और इंसान आपको अंदरुनी तौर पर धीरे धीरे मार देता है।

लेकिन जब संघर्ष करता हूँ खुद को अकेला पाता हूँ और ज्यादा समय तक सबसे अलग नहीं रह पाता ।

और डर के मारे ही सही जहाँ सब दौड़ रहे हैं, लगता है सही ही होगा।

जाने कितनी ही संभावनाएं बनी और ढह गई, कितनी बार लाखों बेकसूरों का कत्ल हुआ, कितने लोगों ने ज़िन्दगी झूठ को गले लगाकर गुज़ार दी ।

और अब फिर मैं और तुम उसी सवाल पर खड़े हैं, जीने की उसी लड़ी में बंधते जा रहे हैं ।

कोई एक खूबसूरत सपना देखना, सपनों के सहारे चलते-चलते सच का मिल जाना बहुत ही आंखे खोलने वाला अनुभव होता है।

इस विशाल ब्रह्मांड में हम बहुत ही सूक्ष्म हैं, और अरबों इंसानो में भी बस एक जो इस वक्त सांस ले रहे हैं,जी रहे हैं।

फिर भी रुक कर सब कुछ देखना भूल गए हैं, बनी बनाई रिवायतों, बने बनाये जीने के तरीकों, खुशी व्यक्त करने के वही एक जैसे ढ़ंग, दुख में दया दिखाने के दिखावे ।

नया करने की कोशिश करनेवालों को अजीब नज़रों से देखा जाता है ज्यादातर पागल बोल दिया जाता है।

लेकिन जब वो कुछ नया तरीका ढूंढ लेता है तब हम सब मुर्दा लाश की तरह उसे स्वीकार कर लेते हैं और किसी अद्भभुत चमत्कार की तरह उस पागल को देखने लगते हैं।

इंसान की शक्तियां असीमित हैं,कोई भी व्यक्ति किसी भी तरह के लक्ष्य को पा सकता है ।लेकिन हमारा सामाज और हमारी शिक्षा जो की लोगों के भले और उन्हें किसी भी तरह की सोच से मुक्त करने के लिए बने थे,आज एक तरह का ढांचा बन कर रह गए हैं।

हम इतने तरह के ढांचे बनाते समय ये अक्सर भूल जाते हैं कि जिन के लिए ये बने हैं वो इंसान हैं न की मशीनें ।

और इंसान के पास असीमित शक्तियों का भंडार है जो किसी भी ढांचे में नही बंधती।

किसी भी कार्य को करने के लिए इच्छाशक्ति जरूरी होती है और जो कि हर तरह के कामों में हर इंसान अपने रुचि या डर से प्रकट करता है,लेकिन अक्सर ये बस डर के कारण होता है।

आज के समाज में किसी भी व्यक्ति को गौर से देखें तो वो डरा हुआ है और फिर उसके आसपास के लोग उसके डर का इस्तेमाल करते हैं बल्कि चाहिए ये कि उस व्यक्ति को रास्ता दिखाया जाए जहाँ वो डर पर काबू पा ले । •

जतिन देव, छात्र

उदारदिल महान राजा

किसी समय बनारस के एक राज्य का राजा शांतिपूर्वक शासन करता था। उसके न्याय और बुद्धिमानीपूर्ण शासन से उसकी प्रजा उसे बहुत प्रेम करती थी।

एक बार उसके राज्य पर विरोधी राजा ने आक्रमण कर दिया। दुर्भाग्यवश राजा हार गया और युद्ध के मैदान से उसे अपनी जान बचाने के लिए भाग जाना पड़ा। बचते-बचाते वह एक गाँव में जा पहुँचा।

उस गाँव में हरी नाम का एक दयालु और भला किसान रहता था। उसकी नजर घायल राजा पर पड़ी तो वह उसे अपने साथ घर ले आया। वहाँ उसने राजा के जख्मों पर मरहम पट्टी की। जब तक राजा ठीक नहीं हो गया, तब तक वह देखभाल करता रहा। अच्छा हो जाने पर राजा ने हरी से प्रेमपूर्वक पूछा, हरी, तुम जानते हो, मैं कौन हूँ? मैं इस राज्य का राजा हूँ। तुम्हारे उपचार और देखभाल से मैं बहुत खुश हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे महल आओ। मैं तुम्हारी सेवा के लिए तुम्हें पुरस्कार देना चाहता हूँ।

समय बीतते-बीतते राजा ने अपनी खोई हुई शक्ति और सम्मान वापस पा लिया। कुछ वर्षों बाद खोया हुआ राज्य भी वापस पा लिया। दूसरी ओर हरी ने सोचा कि राजा उस जैसे मामूली किसान को क्या याद रखेंगे। इसलिए वह राजा से मिलने नहीं गया।

लेकिन दयालु राजा अपने रक्षक को नहीं भूल पाया। काफी समय तक राजा को जब हरी के विषय में कुछ नहीं पता चला तो वह चिंतित हो गया। राजा ने अपने कुछ मंत्रियों को हरी को ढूँढ़कर लाने का आदेश दिया। मंत्री हरी का पता लगाकर राजा के पास लाए तो राजा ने उसका बेहद सम्मान किया और कहा मैं सम्मानपूर्वक अपना आधा राज्य तुम्हें सौंपना चाहता हूँ। तुमने जिस प्रकार से मेरी देखभाल की थी, वह एक भाई ही भाई के लिए कर सकता है। आज से तुम मेरे भाई के समान हुए।

फिर राजा ने हरी को आधा राज्य सौंप कर उसके लिए एक बहुत सुंदर महल बनवाया। अब वे दोनों जिगरी दोस्त की तरह रहन लगे। उन दोनों की एकता और मित्रता इतनी मजबूत थी कि कोई शत्रु उन पर आक्रमण करने से डरता था। और अगर कर भी देता तो निश्चित ही उनकी हार होती थी। अब उनके राज्य में प्रजा बहुत खुश और समृद्ध हो गई थी। •

संग्रह स्रोत-जातक कथाएं

बच्चों अपने जीवन में यह ध्यान रखो

बच्चों !

→ आलस मत करो। आलसी का कोई काम ठीक नहीं होता।

→ तुम किसी की निन्दा करोगे। वह तुम्हारी निन्दा करेगा।

→ तुम किसी से घृणा करोगे। वह तुमसे घृणा करेगा।

→ जो किसी को धोखा देता है। वह स्वयं भी धोखा खाता है।

तदनुसार कार्रवाई की जाए	Action may be taken accordingly
संबद्ध व्यक्तियों को दिखाकर फाइल कर दीजिए	Circulate and then file
शीघ्र आदेश भेजने की कृपा करें	Early orders are solicited
इसमें इसके पश्चात	Here-in after
मत प्रकट करने के लिए	For expression of opinion
कृपया अनुदेश देने का अनुग्रह करें	Instructions are solicited
अधिकार के रूप में	As a matter of right
अनुप्रमाणित सही प्रतिलिपि	Attested true copy

संस्थान में पहला कम्प्यूटर लाते हुए

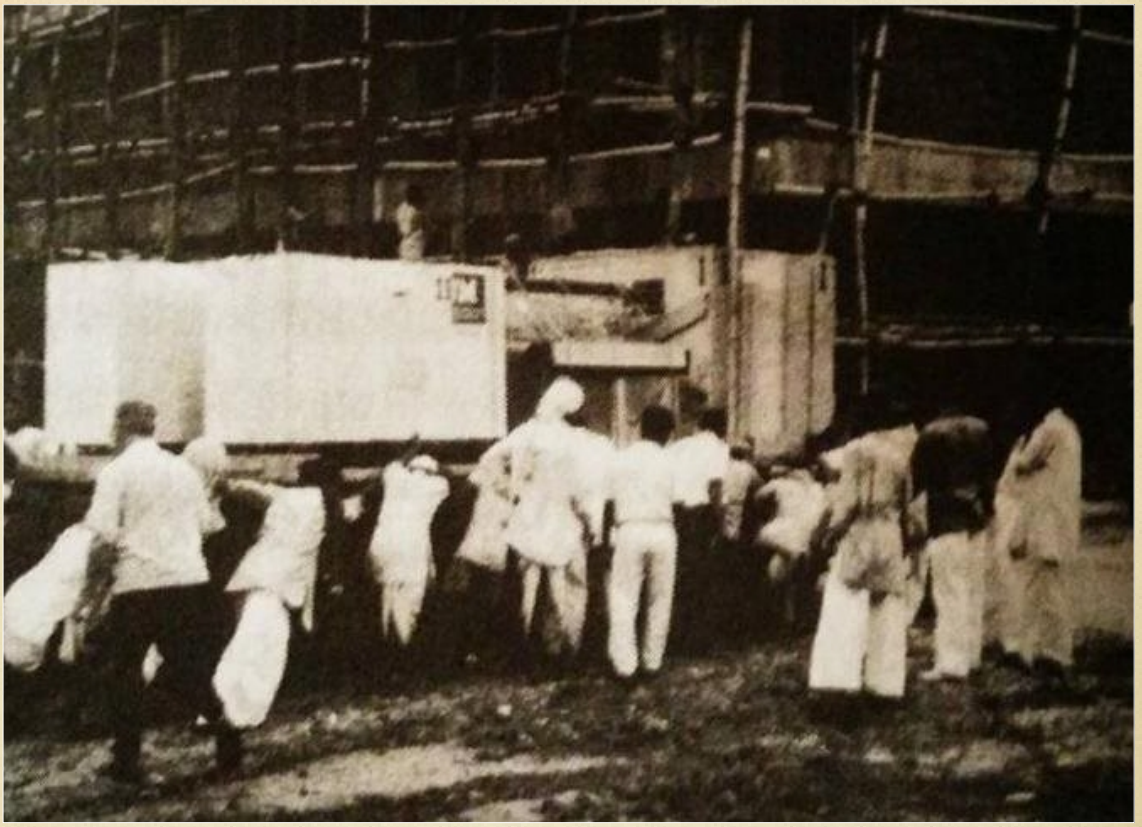

संपर्क
राजभाषा प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर (उ.प्र.)
दूरभाष-0512-259-7122
ईमेल-arkverma@iitk.ac.in, vedps@iitk.ac.in, sunitas@iitk.ac.in
वेब-http://www.iitk.ac.in/infocell/iitk/newhtml/Antas

अभिकल्प-सुनीता सिंह